# संपादकीय

सत्साहित्य भी हमारे गुरु हैं। आज बिगड़ती हुई मानसिकता ने सारे समाज को निकृष्टता की पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया है क्योंकि सद्गुरु या सत्साहित्य के बिना बुद्धि का परिमार्जन नहीं होता। पुरातन संस्कृति व सभ्यता में जो सांस्कारिक–सौन्दर्य था, उसका कारण ऋषि–मुनियों के जीवन से प्रेरणा और साहित्यिक गरिमा ही थी। जनमानस को सुसंस्कारित करने के लिए संत और साहित्य का आश्रय परमावश्यक है। ऐसी ही भावनाओं के सर्वत्र संप्रेषण की कामना से '**मानमन्दिर–पत्रिका**' का प्रकाशन परमावश्यक समझा गया। आशा है कि पाठक पत्रिका में निहित महत्–विचारों का लाभ समाज तक पहुँचायेंगे।

**श्री राधाकान्त शास्त्री**

(मानमन्दिर व्यवस्थापक)

# अनुक्रमणिका


| | | |
|---|---|---|
| १. | मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा ब्रज के दिव्य..... | ३ |
| २. | केवल सतत् सत्संग से ही भक्ति का परिपोषण | ४ |
| ३. | रसीली ब्रज यात्रा | ६ |
| ४. | पूतना मोक्ष | ८ |
| ५. | साधन के बाद भी अनुभव क्यो नहीं ? | १० |
| ६. | गौ–संवर्द्धन से ही सर्वसमृद्धि | १२ |
| ७. | कृष्णप्रेममयी रानीरत्नावती | १४ |
| ८. | विशुद्ध प्रेम की पहिचान | १६ |
| ९. | मानिनी की नूपुर–ध्वनि से धन्यातिधन्य हुए मानबिहारी | १९ |
| १०. | लीलारस–वैचित्री कोष 'ब्रजभूमि' | २१ |
| ११. | सम्पूर्ण सृष्टि का मूलहेतु 'भगवन्नाम' | २३ |
| १२. | नहीं ऐसो जनम बारम्बार – मीरा जी | २५ |
| १३. | Sudarshana Dwipa | २७ |
| १४. | गुरुकुल बाल वर्ग | ३० |


श्रीमानमन्दिर की बेवसाइट www. maanmandir. Org के द्वारा आप बाबाश्री के प्रात:कालीन सत्संग का ८.३० से ९.३० तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६.३० से ७.३० तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं। इस पत्रिका में दिए गए श्रीबाबामहाराज के सत्संग पर आधारित लेखों को यू. टूब. (You Tube) के द्वारा उपलब्ध सत्संग के माध्यम से लाभ उठाया जा सकता है।


**संरक्षक –**

**श्री राधा मान बिहारी लाल**

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान अनेकानेक सत्कार्यों का संचालन प्रभु की प्रियता व लोक कल्याण की भावना से नि:शुल्क कर रहा है, उसी तरह 'मान मंदिर' पत्रिका का भी कोई शुल्क नहीं रखा गया है।

श्रद्धानुसार भावार्पित तुलसीदल भी ग्राह्य है अर्थात् स्वेच्छानुदान स्वीकृत है।

**प्रकाशक –**

**श्रीराधाकान्त शास्त्री**

**श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान**

गह्वर वन, बरसाना, मथुरा (उ. प्र.)

Website : www.maanmandir.org

E-mail : ms@maanmandir.org

Tel. : 9927338666, 9837679558, 9927194000

# मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा ब्रज के दिव्य पर्वतों की रक्षा का संघर्ष जारी

–श्री राधा कान्त शास्त्री
(मान मंदिर व्यवस्थापक)

यद्यपि मंदिर पिछले ७० वर्षों से ब्रज के वन, उपवन, नदी, सरोवर व गौमाता के संरक्षण–संवर्द्धन में ब्रज के परम विरक्त संतप्रवर पूज्यश्रीरमेशबाबा महाराज की कृपा से सतत् सेवारत् है, फिर भी समय–समय पर विशेष परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। आदिबद्री एवं कनकांचल पर्वतों की रक्षार्थ जो आन्दोलन २१ फरवरी से चल रहा था, उसे ४५ दिन हो जाने पर भी जब कोई सफलता नहीं मिली तो वही स्थिति उत्पन्न हो गयी जैसे भगवान् राम ने समुद्र से तीन दिन तक प्रार्थना किया परन्तु रास्ता नहीं मिला।

**विनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।**
**बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥**

(श्रीरामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड - ५७)

ब्रजवासी व संतों का धैर्य भी जवाब देने लगा। २ अप्रैल की चेतावनी राजस्थान जिला प्रशासन को दे दी कि वन–क्षेत्र से खनन–माफिया का रास्ता यदि बंद नहीं किया तो हजारों ब्रजवासी उसी रास्ते पर बैठ जायेंगे, फिर वही हुआ। २ अप्रैल को हजारों की संख्या में संत, ब्रजवासियों ने महापंचायत की, जिसमें निर्णय लिया गया कि सभी लोग उस रास्ते को घेरकर बैठेंगे जहाँ से वन क्षेत्र के मार्ग में खनन–माफिया के वाहन पत्थर ले जाते हैं। भारी भीड़ भगवन्नाम जयघोष के साथ आगे बढ़ी तो पुलिस–प्रशासन ने रोक दिया परन्तु जिनका सब कुछ ब्रजभूमि में ही सन्निहित है, भला उन्हें कौन रोक सकता है। स्थिति को देखकर प्रशासन ने रास्ता काटने के लिए जे. सी. बी. मँगवाई परन्तु उसमें भी बहुत विलम्ब यह सिद्ध कर रहा था कि खनन–माफिया का प्रभाव उन्हें बाधित कर रहा है, फलतः हमने बरसाना माताजी गौशाला से अपनी जे. सी. बी. मँगाने की सूचना दी। इसके बाद उनकी भी दो मशीनें आ गयीं और अन्ततः वह रास्ता काट दिया गया। संध्या को प्रदेश के कैबिनेट मंत्री श्री अरुण चतुर्वेदी और खनन–सचिव अपर्णा अरोड़ा सहित सैकड़ों अधिकारी, कर्मचारी घटना–स्थल पर पहुँचे। उसके पूर्व वृन्दावन के मूर्धन्य संतो ने मुख्यमंत्री को पत्र लिखकर स्थिति से अवगत करा दिया था और दिव्य पर्वतों के शेष भाग को वनभूमि में परिवर्तित करने को कहा था। मंत्री जी ने घटना–स्थल पर कहा कि हमारी सरकार ने २००८ में ५२३२ हेक्टेयर पर्वतीय क्षेत्र वन–विभाग को दिया था और अब भी हमारी सरकार है, यह कार्य भी हो जाएगा, हमारी बात मुख्यमंत्री जी से हो गई है। उनके आश्वासन के बाद धरना समाप्त हो गया।

खनन–माफिया धन की मदान्धता में संतों के सम्मुख नत–मस्तक होने को कहाँ तैयार था, दूसरे ही दिन रास्ते को कटवा दिया और जहाँ से न्याय की आशा होती है उस न्यायालय को भी प्रभावित कर लिया। पर्यावरण नियमों के अनुसार जिन्हें सुनने का कोई अधिकार ही नहीं था, गलत आदेश से खनन–माफिया को राहत प्रदान कर दी। महापुरुष कोई स्वार्थ की लड़ाई नहीं लड़ते। पूज्य बाबाश्री ने कहा कि जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं, वहीं विजय सुनिश्चित है–

**यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।**
**तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥**

(श्रीमद्भगवद्गीता १८/७८)

सरकार के साथ संत–महात्माओं की बात सकारात्मक चल रही है। बहुत शीघ्र ही सफलता मिलेगी। आश्रय ब्रजाधीश का है, किसी प्राणी का नहीं।

**एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास।**
**एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास॥**

❑❑❑

**विरक्त संत**
**श्री रमेश बाबा महाराज के नित्य**
**प्रवचन साधना चैनल पर**
**प्रातः ७:२० से**

**ब्रज बालिका साध्वी मुरलिका**
**जी शर्मा द्वारा श्रीमद्भागवत कथा**
**का नित्य प्रसारण श्रद्धा चैनल पर**
**शाम ३ से ४ बजे तक**

# केवल सतत् सत्संग से ही भक्ति का परिपोषण

(ब्रजबालिका साध्वी सुश्री मुरलिका जी शर्मा)
मान मंदिर

हमारे भक्ति-शास्त्रों में, वैष्णव-ग्रंथो में भगवद्प्राप्ति से भी श्रेष्ठ प्राप्ति सत्संग की प्राप्ति मानी है। बड़ा सुंदर प्रंसग है मानसजी का - साक्षात् रामजी खड़े है शंकर जी के सन्मुख ....। देखा जाए तो भगवद्-प्राप्ति से परे कोई दूसरी प्राप्ति है नहीं। रामजी की प्राप्ति हो गयी, रामजी सामने खड़े हैं और शंकरजी उनसे प्रार्थना किये-

**"बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।।**
**पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।।"**

(रा. मा. उ.-१४)

जब भगवान् मिल गए तो कुछ माँगना बाकी क्यों रह गया ? तो इसे समझने के लिए एक बड़ा सुंदर प्रसंग है श्रीभक्तमालजी का- हमारे वल्लभसम्प्रदाय के अष्टछाप महाकवियों में हुए हैं भगवदीय श्रीकुम्भनदासजी महाराज, जिनके साथ स्वयं श्रीनाथजी प्रतिदिन क्रीड़ा द्वारा व गोद में विराजकर मधुरलीलानन्द प्रदान करते थे। एकदिन कुम्भनदासजी बहुत उदास थे। नाथजी ने कहा- "कुम्भनदासजी ! संसार की सबसे बड़ी प्राप्ति आपको हो गई, मैं आपकी गोदी में बैठा हूँ, आपके साथ बातें कर रहा हूँ, आपके साथ लीला कर रहा हूँ, फिर भी आप उदास हैं!" कुम्भनदासजी बोले- नाथजी ! आपकी प्राप्ति का ज्यादा समय का भरोसा नहीं है। अभी आचार्यचरण श्रीमद्वल्लभाचार्यजी महाराज या गुँसाई विट्ठलनाथजी महाराज मंदिर में आरती, शयन, उत्थापन की घंटी बजा दें, तो आप कब छोड़ के भाग जाओगे कोई भरोसा नहीं है, आपकी प्राप्ति का ज्यादा समय का भरोसा नहीं है लेकिन आपके भक्तजनों पर तो सदा ही भरोसा 'विश्वास' है। यद्यपि मुझे ऐसी प्राप्ति हो गयी जिसके बाद कुछ पाना बाकी नहीं रहा लेकिन मैं कहता हूँ कि यदि आपकी प्राप्ति के बाद भी कोई शेष प्राप्ति रह जाती है तो वह है 'सत्संग की प्राप्ति'। इसलिए आप ऐसी कृपा करें कि मुझे घर में ही ऐसा सत्संग मिल जाए, जिससे मुझे कभी भी बिछोह न हो। तो श्रीनाथजी की कृपा से कुम्भनदासजी के घर में पुत्र रूप में चतुर्भुजदासजी का जन्म हुआ। कुम्भनदासजी महाराज के सात पुत्र थे लेकिन जब इनसे कोई पूछता कि तुम्हारे कितने पुत्र हैं तो कुम्भनदासजी कहते कि हमारे केवल डेढ़ पुत्र हैं। बड़े अचम्भे की बात ...! डेढ़ पुत्र का मतलब क्या हुआ ? तो बोलते- 'एक पुत्र तो चतुर्भुजदासजी हैं और एक आधा पुत्र' (एक भक्त पुत्र को आधा पुत्र मानते थे।) सात पुत्रों में से केवल डेढ़ पुत्रों की गिनती मानते थे श्रीकुम्भनदासजी।

ऐसे ही परम वैष्णव थे श्रीचतुर्भुजदासजीमहाराज, जो पालने में पौढ़े हुए ही सत्संग किया करते थे कुम्भनदासजी के साथ।

कहने का आशय यह है

**पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।।**

सत्संग के साथ जो 'सदा' शब्द का प्रयोग है, ये बहुत ही महत्वपूर्ण प्रयोग है। सत्संग कोई मौसम का व्यापार नहीं है कि हम इसी महीने में सुनेंगे या एक ही बार सुनेंगे या मरने के पहले एकबार सुन जायेंगे। सत्संग तो 'भगति सदा सतसंग' सदा करने वाला नित्य जो साधन की वस्तु है वो सत्संग है।

**सदा सेव्या सदा सेव्या श्रीमद्भागवती कथा।**

(भा.मा. ३/२५)

जो सदा सेवन करने योग्य वस्तु है वो है 'सत्संग'।

**'मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः'**

(भा. १/१/३)

'मुहुः' माने बार-बार सत्संग श्रवण करना चाहिये। बार-बार कथा क्यों सुननी चाहिए ? इसे अच्छी तरह से समझने के लिए एक कथानक है कि एकबार एक ब्राह्मण कहीं किसी यजमान के घर गये, कोई पूजा आदि करानी थी। जब पूजा कराके लौटने लगे तो उस समय यजमान-परिवार ने ब्राह्मणदेव को गौ-दान दिया (गाय दान में दी)। ब्राह्मण देवता बड़े प्रसन्न हुए गौमाता को पाकर। जब गाय को लेकर चले तो चार धूर्तो (बदमाशों) ने यह देख लिया कि इनको कहीं से गाय मिली है, उन चारों धूर्तो ने मन में विचार किया कि किसी तरह से इस गाय को हम ले लें। रास्ते में जाते हुए ब्राह्मण देवता के सामने सबसे पहले एक धूर्त आया और बोला- "अरे, ब्राह्मण देवता ! ये बकरी आपको कहाँ से दान में मिल गयी।" तो ब्राह्मण ने कहा- "भैया, तेरा दिमाग खराब हो गया है, ये गौमाता दान में मिली है, तुझे बकरी दिखाई पड़ रही है।" तो वह बोला- "ठीक है, महाराज ! आपकी आखों से ये गाय होगी, पर मेरी आखों में तो ये बकरी है।" ब्राह्मण देवता थोड़ी दूर और आगे बढ़े तो दूसरा धूर्त मिला, उसने कहा- "अरे महाराज ! इस बकरी को उठाये आप कहाँ घूम रहे हैं ? ब्राह्मणों के हाथ में बकरी शोभा नहीं देती।" तो फिर ब्राह्मण को लगा कि पहले व्यक्ति ने भी इसे बकरी कहा, दूसरे व्यक्ति ने भी इसे बकरी कहा। फिर ब्राह्मण देवता आगे चले तो तीसरे धूर्त ने भी यही कहा- "अरे महाराज ! सुबह-सुबह, कहाँ आप बकरी लिए घूम रहे हैं। "तो ब्राह्मण देवता झल्लाये "अरे ! तुम सबके सब अंधे हो गए हो, तुम्हें गौमाता भी बकरी दिखाई पड़ रही है ? तो वह बोला अरे महाराज ! आपका यजमान जादूगर होगा। हो सकता है उसने आपको बकरी दी हो, लेकिन आपको वह गैया दिखाई पड़ रही हो। "तो कुछ-कुछ बात मन में बैठ गई ब्राह्मण देवता के। फिर जब ब्राह्मण देवता आगे बढ़े तो चौथे धूर्त ने भी उसे बकरी सिद्ध किया। तो ब्राह्मण ने सोचा कि अगर बकरी लेकर गाँव में घुसा तो गाँव वाले क्या कहेंगे? हो न हो - ये बकरी हो, चलो इसे यहीं छोड़ दिया जाए। अन्ततः चार धूर्तो के बार-बार झूठ बोलने पर ब्राह्मण देव को उस गाय में बकरी का आभास होने लगा और उस गाय को छोड़कर अपने गाँव में चले गये। उसी समय वे धूर्त 'गौमाता' को लेकर भाग गए।

अत: ये स्पष्ट है कि बार-बार झूठी बात सुनने पर मिथ्या बात में भी सत्य की प्रतीति हो सकती है। बार-बार मिथ्या बातें सुनने से कई बार साधक की आस्था डगमगा जाती है, कई बार श्रद्धा विचलित हो जाती है, कई बार जमा जमाया विश्वास भी उखड़ जाता है। जब बार-बार झूठ सुनने से सत्य में भी झूठ की प्रतीति हो सकती है, तो हो न हो, बार-बार दुनिया की बातें सुनने से हमारी श्रद्धा और विश्वास में कहीं न कहीं, कोई न कोई कमी आ जाए, इसलिए उस श्रद्धा और विश्वास की परिपक्वता के लिए ही बार-बार सत्संग करना चाहिये, निरंतर कथा-कीर्तन सुनते रहना चाहिए।

शंकराचार्यजी महाराज का एक श्लोक है, जिसमें उन्होंने कहा है कि तीन चीजें जीवन में केवल **'देवानुग्रह हेतुकम्'** भगवान् की कृपा से मिल सकती हैं

**मनुष्यत्वं मुमुक्षत्वं महापुरुष संश्रया:।**

पहली चीज- मानव जीवन में मानवता का आना।

दूसरी चीज- मानव शरीर पाकर संसार से छूटने की इच्छा पैदा होना।

तीसरी चीज- सत्संग का लाभ।

ये तीन चीजें किसी साधन का फल नहीं हो सकतीं, ये केवल कृपा का फल होती हैं। मानव-जीवन भी मिल जाए तो मानवता नहीं मिलती है, अब देखो- चोर, डाकू, आतंकवादी और यवन ये सब लोग मानव ही तो हैं, लेकिन मानवता नहीं है।

मुमुक्षा संसार से छूटने की इच्छा बिना कृपा के नहीं होती। अन्य इच्छायें तो बहुत हो जाएँगी, लेकिन भगवान् के प्रेम-प्राप्ति की इच्छा बिना कृपा के नहीं होती।

बड़ा सुंदर उदाहरण संतजन देते हैं

एकबार किसी कैदखाने में एक राष्ट्रपतिजी पहुँचे, वहाँ सभी कैदियों से मिले और सबसे पूछा कि तुम्हें क्या दु:ख है ? तो जब पहले कैदी के पास पहुँचे और बोले कि तुम्हें क्या दु:ख है? तो वह बोला - "महाराज ! सर्दी का समय है, दो रोटी देते हैं और चार रोटी की भूख होती है, चार रोटी की व्यवस्था करा दीजिये।" तो राष्ट्रपति जी बोले कि ठीक है आज से चार रोटी मिलेंगी। दूसरे कैदी के पास पहुँचे और बोले कि तुम्हें क्या समस्या है? वह बोला कि जाड़े का समय है, एक कम्बल में ठण्ड नहीं रुकती, दो कम्बल की व्यवस्था करा दीजिये। तो वे बोले कि ठीक है, आज से दो कम्बल मिलेंगे। तीसरे के पास पहुँचे और पूछा कि तुम्हें क्या समस्या है ? वह बोला कि हुजूर ! और तो कुछ नहीं, यहाँ गंदगी बहुत रहती है, थोडा साफ-सफाई हो जाए तो ज्यादा अच्छा है। तो राष्ट्रपति बोले - "ठीक है, ये भी पूर्ण हो जायेगी।" चोथे कैदी के पास पहुँचे, वह थोड़ा गंभीर व्यक्ति था। उससे भी पूछा कि तुम्हें क्या समस्या है? वह बोला- "महाराज ! और तो कुछ नहीं, जेल में पड़ा हूँ, बस ये समस्या है।" तो राष्ट्रपति ने पूछा कि क्या चाहते हो ? तो वह बोला कि अगर आप चाहें तो आज ही मेरी जेल से मुक्ति करा सकते हैं। मुझे यहाँ से मुक्त करा दो बस।

आदेश हुआ और वो कारागार से छुट्टी पा गया। इच्छायें तो औरों (दूसरे कैदियों) की भी थीं लेकिन छूटने की इच्छा किसी की नहीं थी। "हमें ये कमी है, हमारी व्यवस्था में ये समस्या है, हमारा धन्धा ठीक नहीं चल रहा है, हमें सम्मान नहीं मिल रहा है" ऐसी अनरगल इच्छाएँ (व्यर्थ वासनायें) तो हम जैसे लोगों को भी होती हैं लेकिन संसार से छूटने कि इच्छा किसे है और संसार से छूटने की इच्छा यदि हो जाये तो ऐसा नहीं है कि ठाकुरजी छुटकारा न दें। इच्छा होनी चाहिये, छुटकारा तो तत्काल मिल जाए। तभी तो शंकराचार्यजी ने कहा है कि 'मुमुक्षा' संसार से छूटने की इच्छा बिना भगवद्-कृपा के नहीं होगी। भिखारी तो हम लोग सदा से ही रहे हैं, कभी ये माँगा, कभी वो माँगा, क्या-क्या नहीं माँगा और क्या-क्या नहीं माँग रहे हैं लेकिन जो माँगने योग्य वस्तु है वो हम लोगों से छूट रही है।

**तुमसी न कोई दाता, मुझसा नहीं भिखारी।**
**दोनों की है पुरानी आदत अनूठी भारी।।**
**तुमने दिया सदा से, हमने हमेशा माँगा।**
**पर तेरे दर न माँगा, दर दर बना भिखारी।।**
**माँगा हजारों दर पै, ठोकर हजारों खाई ।**
**क्या देंगे वे बिचारे, जो खुद ही बने भिखारी ।।**

हे नाथ ! मै सदा से भिखारी रहा हूँ और आप सदा से देने वाले। पर मैंने वह आज तक नहीं माँगा जो मुझे माँगना चाहिये था। संसार से छूटने की इच्छा हम लोगों ने कभी भी व्यक्त नहीं की। ये हम लोगों का दुर्भाग्य है कि भगवद्-प्रेम कभी नहीं माँगा, जो माँगने की वस्तु है।

**तेरे बिना श्री राधे, कुछ भी नहीं है जीना।**
**तुम ही हो मेरी जीवन, आनन्द मूर्ति प्यारी।।**
**लाई है तेरे दर पै, मुझको बड़ी ये किस्मत।**
**जाऊँगा अब न उठके, सुनले विनय हमारी।।**

(श्रीबाबामहाराज द्वारा रचित पद)

श्रीबाँकेबिहारीलाल के प्राकट्यकर्ता, वृन्दावन के मूर्धन्य रसिकाचार्य, स्वयं श्रीललिता सखी के अवतार स्वामी श्रीहरिदासजी महाराज का एक पद है

**हे हरि मोसो न बिगारन को, तोसो न सँभारन सो, मोहि तोहि परी होड़।**

स्वामीजी कह रहे हैं बिहारीजी से कि आपमें और हममें होड़ लग गई है, आपके जैसा कोई बनाने वाला नहीं है और मेरे जैसा कोई बिगाड़ने वाला नहीं है। अब देखना यह है कि जीत किसकी होगी ? अब तक तो मेरी हो रही है (अभी तक मेरी बिगड़ ही बिगड़ रही 'केवल पतन ही हो रहा' है) और अब आगे पता चलेगा। (इस दैन्ययुक्त पद में सांसारिक जीवों की दशा बताई है।) कृपा-करुणामय भगवान् ने असीम अहैतुकी दया की हम लोगों पर मानव शरीर मिल गया, मानव शरीर के उपयुक्त वस्तुएँ हमें मिल गई, घर बैठे हमको सत्संग, संत-वैष्णवों का संग मिल गया, ये कम कृपा की बात नहीं है, बहुत बड़ी कृपा है। कहाँ वैष्णवों का दर्शन होता है, कहाँ विशुद्ध सत्संग की प्राप्ति हो पाती है।

**अति हरि कृपा जाहि पर होई। पाउँ देइ एहिं मारग सोई।।**

(रा.मा.उ.-१२९)

❑❑❑

# रसीली ब्रज यात्रा

(शास्त्रों में ब्रजपरिक्रमा का अत्यधिक महत्त्व है। स्वयं नंदनंदन ने ब्रह्मा जी से कहा- ''ब्रज परिकम्मा करहु देह को पाप नसावहु'' (सूरसागर) (भा. १०/१४/४१ त्रिः परिक्रम्य) मान मंदिर द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ ''रसीली ब्रज यात्रा'' भाग-१ के माध्यम से आइये हम लोग ब्रज यात्रा करते हैं। इस क्रम में पहला पड़ाव है-

## बरसाना

श्रीजी "बड़ा सुन्दर जोगी है, पास में कमण्डल भी है।"

१ सखी "देखो तो नीचे मृगछाला और ऊपर बाघम्बर।"

२ सखी "इसकी भृकुटी बड़ी कटीली है।"

३ सखी "चलो चलो पूछें तो कहाँ से आया है, कौन है?"

(सब निकट पहुँचती हैं और एक साथ)

"बाबा प्रणाम ! ! बाबा दण्डवत् ! !"

१ सखी "महाराज ! आप कहाँ से पधारे हैं ?"

२ सखी और "अब आप कहाँ जाओगे ?"

(जोगीराज मौन रहे, कुछ नहीं बोले)

(सब सखियाँ आपस में)

१ सखी "महात्मा तो बड़ा ऊँचा लगता है।"

३ सखी "देखो तो, समाधि में कैसा डूबा हुआ है।"

(एक बार पुनः प्रयास)

"जोगीराज जी ! महाराज जी ! कहाँ से आये हो ?"

(धीरे-धीरे नेत्र खोलते हुए) "दक्षिण दिशा से आये हैं हम।"

"ओह ! तो यह गिरिराज जी की ओर से आया है, यहाँ से गिरिराज दक्षिण दिशा में है।"

(किशोरी जी हँसते हुए थोड़ा व्यंग करती हैं) "जोगीराज जी ! बाबा जी बने तो वन में रहते, और यदि वन में नहीं रहना था तो बाबा जी क्यों बने ? तपस्वियों का वेष क्यों लजा रहे हो ? शंख बजाते हुए, बरसाने की वीथियों में घूम रहे हो, घर घर घूमना तपस्वियों का काम नहीं है।"

"आखिर तो हमारी राधा ६४ कलाओं की ज्ञाता है।" सब गोपियों ने एक साथ हँसते हुए कहा।

राधा बोलीं "जोगी तो भभूति, राखादि लगाते हैं और आप ये सुन्दर सुगन्धित चन्दन लगाये घूम रहे हैं, जोगी का श्रृंगार से क्या सम्बन्ध ?"

(श्रीजी सखियों से) श्रीजी "अरी ! इसके कोमलाङ्ग देखकर तो मेरा मन कहता है कि कहीं भगवती पार्वती ही तो जोगी रूप धारण करके नहीं आ गयीं ? दूसरी बात यह भी है कि जोगियों की मुद्रा तो बड़ी शान्त होती है परन्तु यह तो तनिक हमारी पायल की ध्वनि सुन ले तो झट हमारी ओर देखता है। बड़ा चंचल है और बड़ा चतुर है, हमें देख कर इसने अपने नेत्र बन्द कर लिये।"

सब सखियाँ "हाँ हाँ राधे ! तुम ठीक कहती हो, यह जोगी नहीं भोगी है।" श्रीजी ने सब पोल खोल दी।

जोगीराज सोच रहे हैं कि अब यहाँ रुकना ठीक नहीं, जितनी देर रुकेंगे अपमान होगा। क्रोध भी नहीं कर सकते, फिर कहेंगी कि साधु होकर क्रोध करता है, साधु लोग तो दया करते हैं, जोगीराज ने कहा कि तुम लोग हँसती हो, कोई बात नहीं। हम तो दया करते हैं, लो प्रसाद ले लो। भभूती का प्रसाद दिया उनको और वहाँ से चल पड़े, पर जितनी भी सहचरियाँ थीं, श्री कृष्ण ने उनका चित्त छीन लिया और अब, सब दर्शन की इच्छा से घूमने लगीं।

इसी लीला को 'गर्ग संहिता' के माधुर्य खण्ड, अध्याय ११ में इस तरह से लिखा है कि श्री कृष्ण जोगी बनके आते हैं, सहचरी सखियाँ पूछती हैं "तुम कौन हो ?"

श्री कृष्ण बोले, "मैं सिद्ध जोगी हूँ। मेरा नाम सिद्ध जोगी है।"

सखियाँ पूछती हैं, "कहाँ रहते हो आप ?"

श्री कृष्ण बोले, "मान सरोवर-हिमालय में।"

सखियाँ पूछती हैं, "महाराज, आपके लिए कोई भोजन आदि लायें।"

श्री कृष्ण बोले, "नहीं, हम तो कुछ नहीं खाते। बिना खाए-पिये ही रहते हैं।"

सखियाँ पूछती हैं, "अगर इतनी तपस्या करते हो, तो कोई ऋद्धि सिद्धि मिली है ?"

श्री कृष्ण बोले, "हमको दिव्य दृष्टि मिली है।"

एक सखी बोली, "उससे क्या होता है ?"

श्री कृष्ण बोले, "हम तीनों काल की जानते हैं।" यह सुनते ही सब सखियाँ इकट्ठी हो गयीं।

दूसरी सखी बोली, "महाराज आप कोई मन्त्र–जन्त्र भी जानते हो ?"

श्री कृष्ण बोले, "उच्चाटन, मोहनी, मारण, मन वशीकरण, सब जानते हैं।"

तीसरी बोली, "अच्छा महाराज, हमारे मन में क्या है, आप सिद्ध हो तो बताओ ?"

उन्होंने आँख बंद कर लीं और बोले कि "कान में कहने योग्य बात है। सब जगह नहीं कह सकते, तुम आओ हम तुम्हारे कान में कह देंगे, गुप्त बात है।"

झट सखियाँ बोलीं कि यह तो सचमुच जोगी है क्योंकि हम लोग कृष्ण प्रेम में फँसी हैं, यह बात सबके सामने, ये नहीं कह सकते। बोलीं "चलो मान लिया, तुम सिद्ध हो। लेकिन एक बात बताओ, तुम किसी को बुला सकते हो ?"

बोले– "हाँ, जिसको कहो उसी को बुला दें, मनुष्य, देवी, देवता जो कहो उसे बुला दें।"

सखियाँ बोलीं– "अच्छा, हमारे मन में जो है, वह आप जानते हो, अगर आप, उसको बुला दो तो हम आपको जोगी जानें।"

जोगी राज बोले– "काम तो कठिन है, पर आप आँख बंद करो तो हम उसे बुला देंगे।" सब सखियों ने आँखें मूँद लीं। जोगी राज बोले, "जब हम ताली बजाएँ तब तुम आँखें खोल लेना।" सबने कहा "ठीक है"। उन्होंने जब ताली बजाई, तो सब सखियों ने आँखें खोलीं। देखा, श्री कृष्ण खड़े हैं !

## मयूर कुटी

ततो मयूर कुटी दर्शन प्रार्थना मन्त्र –

**किरीटिने नमस्तुभ्यं मयूरप्रियबल्लभ ।**
**सुरम्यायै महाकुट्यै शिखण्डिपदवेश्मने ॥**

(आ वा)

अर्थात्– "मयूरों के प्यारे अति रमणीक मयूर कुटी एवं मोर मुकुटधारी आपको भी नमस्कार है ।" दानगढ़ की चोटी से आगे ही मयूर कुटी है ।

यहाँ पर कई तरह की लीलाएँ हुई हैं । एक तो यह है कि मोर कुटी में दोनों श्रीराधा–कृष्ण ने मयूर बनकर नृत्य किया था और दूसरी लीला यहाँ मानिनी को रिझाने हेतु श्रीकृष्ण ने मयूर का रूप धारण किया । अद्‌भुत मयूर से आकर्षित होकर, श्रीराधा कहने लगीं, "अरे मयूर ! ऐसा ही नृत्य तो हमारे प्यारे किया करते हैं ।" यह सुनकर अपने मयूर रूप को छोड़कर श्रीकृष्ण बोले, "मैं ही तो आपका प्यारा हूँ ।" बस दोनों हँस गये एवं मिलन हो गया फिर दोनों ने ही मयूर नृत्य किया

एक लीला यह भी है कि गहवरवन के मोर वहाँ आते हैं तो किसी को श्रीजी कहती हैं कि यह मेरा मोर है और किसी को ठाकुर जी कहते हैं कि वह मेरा मोर है। दोनों में होड़ लगती है कि किसका मोर अच्छा नाचेगा? श्रीजी अपने मोर को नचाती हैं और ठाकुर जी अपने मोर को नचाते हैं। इसी तरह से मोर कुटी पर कई मयूर लीलायें हुई हैं।

ततो मयूरकुटी स्थले रास मंडल प्रार्थना मंत्र –

**नमः सखी समेताय राधाकृष्णायते नमः।**
**विमलोत्सवदेवाय ब्रजमंगलहेतवे ॥**

(ब्र.भ.वि)

अर्थात् – "समस्त सखी गणों के सहित युगल राधा–कृष्ण को नमस्कार है ।"

यहाँ मयूर सम्बन्धित अन्य लीलायें भी हुई हैं, जो मन को आनन्द प्रदान करने वाली हैं ।

**जहाँ मोर काछ बाँधे नृत्य करत**

(केलिमाल१४)

**होड़ परी मोरनि अरु स्यामहिं**

(केलिमाल ८२)

**नाचत मोरनि संग स्याम मुदित स्यामाहिं रिझावत**

(केलिमाल९६)

❑❑❑

*क्रमशः....*

# पूतना मोक्ष

अन्तर्राष्ट्रीय कथा व्यास डॉ. श्री रामजीलाल शास्त्री
(मान मन्दिर, बरसाना)

भादों शुक्ल नवमी को नंदोत्सव बड़ी धूम से नंदजी के गोकुल में मनाया गया। बड़े–बड़े गोपों को गोकुल की रक्षा के लिए छोड़कर नंदजी कंस का वार्षिक कर देने मथुरा आये । वसुदेवजी को जब नंदजी के आगमन का पता लगा तो वे स्वयं नंदजी से मिलने आये और ये नहीं कहा कि कृष्ण हमारा ही बालक है, हम रात को उसे आपके यहाँ पहुँचा दिए थे। बल्कि उन्हीं के भाग्य की सराहना करते हुए बोले– "नन्द ! बड़ी खुशी की बात है कि अस्सी साल की अवस्था में आपके यहाँ लाला का जन्म हुआ है। आप कंस का कर दे ही चुके हैं, अब अधिक समय आपका यहाँ रुकना अच्छा नहीं है । आप जानते हैं – कंस बड़ा दुष्ट है, इसने अपने ही भांजों को मार डाला । ये गोकुल में न जाने क्या उपद्रव रच डाले ।"

**"नेह स्थेयं बहुतिथं सन्त्युत्पाताश्च गोकुले।"**

(भागवत १०/५/३१)

नंदजी यह विचार करके कि वसुदेवजी की बात झूठी नहीं हो सकती और इस आशंका के भय से नंदजी शीघ्र ही गोकुल के लिए चल दिये ।

इधर कंस की प्रेरणा से भेजी गयी पूतना नाम की राक्षसी एक सुंदर स्त्री का रूप बनाकर अपने स्तनों में कालकूट विष लगाकर कृष्ण को स्तन पिलाने के बहाने जहर देकर मारने की नीयत से नन्दजी के गोकुल में आई । नन्दभवन पहुँची और माँ यशोदा से बोली कि मैं मथुरा से आयी हूँ, ब्राह्मणी हूँ, मेरे पतिदेव बहुत बड़े ज्योतिषी हैं, उन्होंने बताया कि आपके एक लाला हुआ है, मैंने भी सोचा कि चलूँ, लाला को आशीर्वाद दे आऊँ ।

यह सुनकर यशोदा मैया बहुत प्रसन्न हुई कि ब्राह्मणी मेरे लाला को आशीर्वाद देने आयी है, उसने एक बात और कही कि जो बालक मेरा एकबार स्तन पी लेता है, वह अमर हो जाता हैं । भला ऐसी कौन–सी माँ होगी जो यह न चाहे कि मेरा लाला अमर हो जाये । यशोदा मैया ने वह स्थान उस पूतना राक्षसी को 'जो लक्ष्मी की तरह शोभायमान हो रही थी' बता दिया । बड़ी खुशी से पूतना चली जहाँ बालकृष्ण पौढ़े हुए थे। पूतना को आते हुए देखकर श्रीकृष्ण ने अपने नेत्र बंद कर लिए। नेत्र बंद क्यों किये ? इस विषय में विभिन्न आचार्यों के अनेक भाव दिये हैं।

महाप्रभु वल्लभाचार्यजी अपनी 'सुबोधिनी' नाम की टीका में एक भाव दिये हैं कि पूतना अविद्या का स्वरूप है । श्रीकृष्ण विचार करने लगे कि यदि मेरे नेत्र खुले रहेंगे तो मेरे सामने अविद्या का रूप टिकेगा नहीं, वह असली रूप सामने आ जाएगा। मेरी मैया डर जाएगी, इसलिए अपने नेत्र बंद कर लिए । श्रीकृष्ण सोच रहे हैं कि इसने रूप तो इतना सुंदर बना रखा है परन्तु मुझे मारने के लिए अपने स्तनों में जहर लगा कर आई है, ऐसी हत्यारिणी का मुँह देखना पाप है, इसलिए नेत्र बंद कर लिए । श्रीकृष्ण ने विचारा कि देखो, ये कैसी दुष्ट है 'पूतानपि नयति' ये निर्दोष पवित्रात्मा निष्पाप बालकों को ले जाती है, मार डालती है, ऐसी दुष्टा का मुँह नहीं देखना चाहिए, इसलिए नेत्र बंद कर लिए ।

एक भाव दिया है कि श्रीकृष्ण नेत्र बंद करके शिवजी से प्रार्थना कर रहे हैं कि यह पूतना राक्षसी अपने स्तनों में विष लगाकर आई है, आपको तो विष पीने की आदत है, इस विष को आप पी जाइए और मैं दूध पी लूँगा। एक भाव दिया है कि श्रीकृष्ण सोच रहे हैं कि इस जन्म में तो इसने कोई पुण्य कर्म किया नहीं है, हो सकता है पिछले जन्म में कोई पुण्य कर्म किया हो । नेत्र बंद करके मानो पूतना के कर्मो का लेखा– जोखा देख रहे हैं । पूतना श्रीकृष्ण के प्रच्छिन्न तेज को समझ नहीं पाई, बाल कृष्ण के मुख में विष लगा स्तन दे दिया ।

**"तस्मिन् स्तनं दुर्जरवीर्यमुल्बणं घोराङ्कमादाय शिशोर्ददावथ ।"**

(भागवत १०/६/१०)

श्रीकृष्ण ने रोष में आकर उसके स्तनों को इतनी जोर से दबाया कि उसके प्राणों को ही पीने लगे । वह पीड़ा से चिल्लाई, बोली– "छोड़–छोड़ ।" श्रीकृष्ण बोले– "मैं एकबार जिसे पकड़ लेता हूँ, कल्याण किये बिना नहीं छोड़ता, मेरी मैया ने मुझे छोड़ना

तो सिखाया ही नहीं है।" उसकी आँखें उलट गई, शरीर पसीना से लथ–पथ हो गया, **"प्रस्विन्नगात्रा क्षिपती रुरोद ह"** (भागवत १०/६/११) पीड़ा के मारे रोने लगी, अंत में अपने असली रूप में आ गई । श्रीकृष्ण को लेकर उड़ गई, जब मथुरा की ओर मुड़ने लगी तो वृक्षों से टकराकर गिर गई और उसके प्राण पखेरू उड़ गये, ६ कोस के बीच में उसका विशाल शरीर गिरा । इधर घबड़ाये हुए ब्रजवासी कन्हैया की खोज में आगे बढ़ते जा रहे हैं, बीच जंगल में देखा कि एक विशाल मृत शरीर एक राक्षसी का पड़ा है और कन्हैया उसकी छाती पर बैठा खेल रहा है । गोपियों ने बालकृष्ण को अपनी गोद में लेकर पहले गाय की पूंछ से बालकृष्ण को झाड़ा दिया तत्पश्चात् गोबर व गोमूत्र से शरीर पर लेप किया, इसके उपरान्त कृष्ण के ही विभिन्न नामों से उनकी रक्षा के लिए 'रक्षा–कवच' का पाठ किया । दशम स्कन्ध के अध्याय ६ में श्लोक संख्या २२ से २९ तक ८ श्लोकों में रक्षा–कवच का वर्णन किया गया है । जिसके पठन–पाठन से आरोग्य की प्राप्ति होती है । नन्द बाबा मथुरा से जब गोकुल में लौटकर आए तो उन्हें पूतना राक्षसी के कुकृत्यों का पता चला। उसके विशाल शरीर का एक जगह दाह–संस्कार भी संभव नहीं था। उसके अंगों को काट–काट कर सैकड़ों चिताऐं बनाई गई और फिर उनमें आग लगाई गई । प्रायः देखा जाता है कि जब भी कोई मुर्दा जलता है तो बड़ी भारी दुर्गन्ध फैल जाती है । परन्तु इधर एक बड़ा चमत्कार हुआ – श्रीकृष्ण का स्पर्श होने से उसका शरीर दिव्य बन गया और उसके शरीर से अद्‌भुत दिव्य सुगंध निकलने लगी ।

श्रीकृष्ण कितने दयालु हैं, उनकी दयालुता का बेजोड़ नमूना सारे विश्व के इतिहास में नहीं है । पूतना नाम की राक्षसी अपने स्तन में कालकूट विष लगाकर मारने के लिए गई तो श्रीकृष्ण ने यह नहीं सोचा कि यह राक्षसी है, बाल हत्यारिणी है, परन्तु यह विचारने लगे कि ये भले ही कुछ भी हो कैसी भी हो परन्तु आई तो स्तन पिलाने के लिए है और स्तन पिलाने का अधिकार केवल माँ का होता है । अतः उन्होंने माँ की जो उचित गति होती है, वही गति उस पूतना राक्षसी को दे दी ।

**"लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं व्रजेम।"**

(भागवत ३/२/२३)

जिज्ञासुओं के मन में एक प्रश्न आना स्वाभाविक है कि पूतना राक्षसी थी, कृष्ण को मारने की नीयत से गयी थी, फिर भी श्रीकृष्ण ने उसे माँ की गति प्रदान कर दी ।

यह पूतना राजा की पुत्री थी, जिसका नाम था रत्नमाला । जब वामन भगवान् बलि की यज्ञशाला में तीन पग भूमि माँगने गये थे, उस समय रत्नमाला ने वामन भगवान् के सुंदर रूप को देखा तो मन्त्र–मुग्ध–सी खड़ी रह गई । इसके कोई लड़का नहीं था, सोच रही थी कि अगर मेरे ऐसा लड़का होता तो मैं उसे स्तन पान कराती और मैं भी पुत्रवती हो जाती । परन्तु..... जब बलि ने तीन पग भूमि देने का संकल्प कर दिया तो वामन भगवान् ने विराट रूप धारण कर लिया और एक चरण से सारी पृथ्वी को नाप लिया और दूसरे चरण से स्वर्गादि ऊपर के लोक नाप लिए और बलि को वरुण–पाश में बाँध दिया । हाहाकार मच गया, प्रभु बोले– "दैत्येन्द्र ! तुमने हमें तीन पग भूमि देने का संकल्प किया था, देखो – एक चरण से हमने सारी पृथ्वी को नाप लिया है और दूसरे चरण से स्वर्गलोक आदि, अब तुम्हारे पास देने को कुछ नहीं है । जो संकल्प करने के बाद यदि संकल्पित वस्तु को न दे तो उसे नरक यातना भोगनी पड़ती है, अतः तुम नरक– यातना के लिए तैयार हो जाओ ।"

वामन भगवान् का ऐसा कपटपूर्ण व्यवहार देखकर रत्नमाला कहने लगी– "मैं तो ऐसे लड़के को जहर दे देती ।" प्रभु ने मन ही मन कहा– "जा, तेरा यह भी मनोरथ पूरा होगा ।"

यही बलि की पुत्री रत्नमाला आगे चलकर पूतना नाम की राक्षसी बनी, इसके दो मनोरथ थे।

१. स्तन पिलाने का २. जहर देने का । प्रभु ने दोनों मनोरथ पूर्ण किये ।

❑❑❑

# साधन के बाद भी अनुभव क्यों नहीं ?

(श्री बाबा महाराज के श्रीमद्राधासुधानिधि-सत्संग से संग्रहीत)

**धामापराध क्या है?**

**वृन्दावनस्थेष्वपि यत्र दोषा न रोपयति स्थिर जङ्गमाषु .....।**

धाम में जो भी स्थिर-जंगम प्राणी हैं उनमें प्राकृत बुद्धि करना, दोष दृष्टि रखना, उनमें सच्चिदानन्दघनता की बुद्धि नहीं रखनाय यही धामापराध है।

**ततो पदवीं परात्परं .....।**

इसी कारण से धाम का स्वरुप हमारे सामने प्रकट नहीं हो रहा है अर्थात धाम का अधिदैव रूप नहीं दृष्टिगोचर हो रहा है। जिनकी ऐसी बुद्धि हो जाती है कि यही धाम रसघन है, चिदघन है, आनन्दघन है, तब उसको वास्तविक अनुभूति होती है। जितने भी धामनिष्ठ महापुरुष हुए हैं जिन्होंने धाम के इसी स्वरूप का अपने पदों में वर्णन किया है। यथा महावाणी कार लिखते हैं।

**जय जय वृन्दावन रजधानी।**

**महिमा हितु जानी हरिप्रिया .....।**

अर्थात् ऐसा धाम जहाँ सदा सनातन एकरस विहार होता है।

अथवा

श्री भट्ट जी लिखते हैं

**वृन्दावन एक विहरत जोरी .....।**

अर्थात् एक जोड़ी दिव्य वृन्दावन में विहार कर रही है।

अथवा

श्री हरिवंश महाप्रभु जी 'श्रीहित चतुरासी' में लिखते हैं

**मंजुल कर वेश ते राधा .....।**

**रास में रसिक मोहन वने भामिनि .....।**

अर्थात् ऐसा देश ऐसा वेश ब्रज का वर्णन करते हैं कि जहाँ दिव्य पुष्प हैं, दिव्य गंध है, दिव्य वस्तुएँ हैं।

अस्तु महापुरुषों ने जो धाम के दिव्य स्वरूप का वर्णन किया वह हम लोगों को कहाँ दिखाई पड़ता है जबकि उनको दिखाई पड़ता था क्योंकि उनकी धाम में प्राकृत बुद्धि नहीं थी।

धामापराध से कैसे बचें ?

प्रह्लाद जी कहते हैं कि अगर किसी में दम है तो इस पढ़ाई को पढ़ के देखे, लाख जन्म में ये पढ़ाई मुश्किल है।

असुर बालक प्रह्लाद! तो ये सब राजनीति, अर्थनीति नहीं पढ़ें?

प्रह्लाद जी बोले कि हम जो कह रहे हैं तुम उस पढ़ाई को पढ़ लो, इससे मृत्यु को जीत लोगे। ये उन्होंने तब कहा था जब असुर बालकों ने पूछा था कि प्रह्लाद ! तू मरता क्यों नहीं है, आग में तुझको जलाया जाता है, पहाड़ों से दबाया जाता है, समुद्र में डुबोया जाता है, सर्पो से डसवाया जाता है परन्तु फिर भी तेरी मृत्यु नहीं होती है।

प्रह्लाद जी हमने ऐसी पढ़ाई पढ़ ली है जिससे मौत भी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती है।

कौन सी पढ़ाई है प्रह्लाद ! असुर बालकों ने पूछा ?

प्रह्लाद जी बोले

**परावरेषु भूतेषु ब्रह्मान्तस्थावरादिषु ।**
**भौतिकेषु विकारेषु भूतेष्वथ महत्सु च ॥**

(भा. ७/६/२०)

ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त समस्त छोटे-बड़े प्राणियों में, पञ्चि महाभूतों से रचित वस्तुओं में, तीनों गुणों में और प्रलय में, सृष्टि में सिर्फ एक भगवान् को ही देखना सीख लो। यही सर्वश्रेष्ठ पढ़ाई है। कोई बैरी सामने आया है वह भी भगवान् है, मित्र आया वह भी भगवान् है, दुष्ट आया है वह भी भगवान् है अर्थात् सभी में भगवान् को देखो।

श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन से भगवान् श्रीकृष्ण ने इसी पढ़ाई को पढने के लिए कहा

**सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।**
**साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥**

(गी. ६/९)

अर्जुन ! सुहृद, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषी, बन्धु, साधु तथा पापियों के प्रति भी समान बुद्धि रखो।

**वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥**

(गी. ७/१९)

सर्वत्र सम बुद्धि रखने वाला महात्मा दुर्लभ नहीं सुदुर्लभ है यानी अत्यन्त ही दुर्लभ है।

कौए, बगुले बहुत मिल जाएँगे पर हंस कहाँ मिलता है और उसमें भी राजहंस कहाँ मिलता है ?

इसी तरह सर्वत्र समान बुद्धि रखने वाला महात्मा सुदुर्लभ है। ज्यादातर भेदबुद्धि पैदा करने वाले ही मिलते हैं।

अतएव इस पढ़ाई को अगर कोई पढ़ ले तो धाम का साक्षात् स्वरूप उसके सामने प्रकट हो जायेगा और वह काल को भी जीत लेगा।

**परिहासेष्यन्याप्रियकथनमूका अतिबधिरां परेषां दोषानुश्रुतिं**
**अनुविलोके अन्ध नयना .....।**

परिहास में भी किसी को अप्रिय बात मत कहो।

आँखों से गलत मत देखो।

सामने अथवा पीठपीछे कभी भी अप्रिय चर्चा को मत करो अर्थात् दूसरों के दोष कहना तो दूर रहा सुनो भी मत।

निंदक जो होता है उसको निन्दा करने की आदत हो जाती है, बिना निंदा किये उसको चैन ही नहीं पड़ता है। जैसे शराबी की जीभ शराब पीने के लिए उतावली रहती है उसी तरह निंदक की निन्दा करने को। वह हर समय किसी न किसी की निन्दा करता ही रहता है। इसलिए उसके पास जब जाओ तो बहरे बनकर जाओ, क्योंकि **'अतिबधिरां परेषां दोषानुश्रुतिं'** दूसरों के दोष सुनने से अच्छा है कि अपने कानों को बंद कर लो अर्थात् बहरे बन जाओ। अपने शरीर से किसी को बाधा हो रही है तो उससे अच्छा है जड़ बन जाओ यानी निश्चेष्ट बन जाओ।

कहने का तात्पर्य है कि इस पढ़ाई को सीखो, इससे धामापराध से बच जाओगे। भगवान् के धाम में इस तरह से रहो। इस पढ़ाई को पढ़ने का तात्पर्य इसको क्रिया में धारण करो।

यथा गांधी जी ने एक फोटो बनाया था, जिसमें तीन बन्दर थे। एक कान पर हाथ रखे हुए है, दूसरा आँख पर और तीसरा मुँह पर। इसका तात्पर्य है कि किसी की निंदा मत सुनो, आँखों से दूसरों के दोषों को मत देखो और वाणी से किसी की निंदा मत करो।

परन्तु बड़े दु:ख की बात है कि वर्तमान समय की पढ़ाई क्या है? आज बड़े-बड़े नेता एक-दूसरे की खुलेआम निन्दा-आलोचना करते हैं और इससे निश्चित नारकीय योनियों में जाना पड़ेगा।

इसलिए धाम में इस तरह से रहना चाहिए जिससे धामापराध नहीं होगा और धाम का वास्तविक स्वरूप तुम्हारे सामने आ जाएगा। इसी तरह से प्राचीन महात्मा लोग रहते थे।

बहुत वर्ष पूर्व की घटना है वृन्दावनस्थ गोविन्द देव जी के एक पुजारी थे, उस समय गोविन्ददेव जी वृन्दावन में ही विराजमान थे, फिर जयपुर चले गये। उस समय गोविन्ददेव जी वृन्दावन के राजा माने जाते थे, जैसे अब बाँके बिहारी जी हैं, उनके दर्शन करने के लिए बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी आते थे। एक बार पुजारी जी मंदिर में बैठे थे तो एक कोई दर्शनाथी रोता हुआ आया। उन्होंने पूछा क्यों रोते हो भाई ? हमारे चालीस रुपये चोरी हो गये हैं उसने बताया। उस जमाने के चालीस रुपये आज के लाखों-करोड़ों के बराबर थे। तो पुजारी जी ने चालीस रुपये लाकर उसको दे दिये और कहा कि रोओ मत। वहाँ और भी लोग खड़े थे वे सब आश्चर्य कर रहे हैं कि कायदे से तो इनको जिसने रुपये चुराये थे उसको पकड़वाकर दण्ड दिलवाना चाहिए था लेकिन यही सच्ची धामोपासना है कि ब्रजवासी चाहे चोर हैं, क्रूर हैं, पापी हैं उनमें भी इष्ट बुद्धि रखी जाय।

**ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्य दृश्याश्चये,**
**सर्वान् वस्तुतया निरीक्ष्य परम स्वाराध्यबुद्धिर्मम।।**

(राधासुधानिधि- २६४)

तो जो पूर्व में बताया कि महात्माओं की भी धाम निवास की पद्धति यही थी।

उसका परिणाम ये हुआ कि पुजारी जी जब रात्रि को सोये तो गोविन्ददेव जी ने उनको स्वप्न दिया और नाम बताया कि अमुख व्यक्ति ने पैसे चुराये हैं। पुजारी जी ने उसको बुलवाकर शिक्षा दी और उसने चोरी करना छोड़ दिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि अनुभव तभी होता है जब ऐसा हृदय बन जाये। ब्रज-वृन्दावन में वास इसी भावना के साथ करना चाहिए। धामवास कृष्ण-कृपा से मिलता है, जिसको धामवास मिला है उसे इस कृपा को हाथ से गँवाना नहीं चाहिए, मिली हुयी कृपा हाथ से चली जाए ऐसा नहीं करो। इसीलिए मैं सबसे कहता हूँ कि तुमको मनुष्य शरीर मिला है और राधारानी की कृपा से ये धाम मिला है और तुम यहाँ भी टांग पसारकर सोओगे तो इससे ज्यादा निकम्मापन क्या है ? यहाँ हर समय प्रभु की आराधना में लग जाओ।

**वृन्दावन में बसत ही एतो बड़ो सयान।**
**जुगल चन्द के भजन बिन निमिष न दीजे जान।।**

इस धाम में रहने में चतुरता यही है कि निमिष माने एक क्षण का सत्ताइसवाँ हिस्सा भी भजन सुमिरन के बिना नहीं जाना चाहिए। धाम में रहने का लाभ लो। यहाँ रहकर भी यदि हम लोग आठ घंटा सोवें, निश्चेष्ट पड़े रहें, व्यर्थ की बातें करें, अभाव करें, निंदा करें, दोष-दृष्टि करें, इससे हमारा नुक्सान है, मिली हुयी कृपा नष्ट हो जायेगी।

ये धाम बहुत बड़ा धन है, जो ब्रह्मा आदि को भी दुर्लभ है, साधारण बात नहीं है यहाँ निवास करना। श्रीहरिरामव्यास जी ने लिखा है कि मैं पुकार-पुकारकर कहता हूँ परन्तु इस बात को सुनने-समझने वाला ही नहीं है

**वृन्दावन साँचो धन भईया।**
**कनक कूट कोटिक लगि तजिए, भजिये कुँवर कन्हैया ....।**

ये धाम मिला है बड़ा दुर्लभ है, अगर सोने का पहाड़ भी मिल रहा है तो भी मत जाओ इस मिट्टी के बाहर। चौबीसों घंटे लग जाओ युगलाराधना में। ये वो जगह है जहाँ ब्रह्म पूर्णपुरुषोत्तम भगवान् श्यामसुन्दर भी यहाँ की रज को अपने मस्तक पर चढ़ाते हैं, हम लोग वहाँ बैठे हैं। ये वही कुँजें हैं जहाँ दिनरात आज भी भगवान् का रास चल रहा है

**अहो तेमी कुञ्जास्तदनुपमरासस्थलमिदं**
**गिरिद्रोणीसैव स्फुरति रतिरंगे प्रणयिनी।**

(राधासुधानिधि २०९)

लेकिन देखने के लिए आँख चाहिए अर्थात् भावना चाहिए।

व्यास जी बोले मैं चिल्ला-चिल्लाकर यहाँ की महिमा कहता हूँ लेकिन बहुत थोड़े लोग सुनने वाले हैं बाकी सब लग रहे हैं अपने संसारी काम में।

❑❑❑

# गौ-संवर्द्धन से ही सर्वसमृद्धि

श्री बाबा महाराज के प्रवचन "गौ-महिमा" (२०/०५/२०१२)से संकलित
संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी नवलश्रीजी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

शास्त्रों में लिखा है कि लक्ष्मीजी का निवास गोबर में है। दक्षिण भारत में आज भी सबसे ज्यादा सोना है क्योंकि वहाँ आज भी गाय के गोवर से देहरी-चौका लगता है, ये मान्यता है कि इसमें लक्ष्मी का निवास है। श्रद्धा के साथ गाय के गोबर से चौका लगाने पर अवश्य लक्ष्मी बढ़ती है। यहाँ तक कि वैज्ञानिकों ने बताया है कि अगर गोबर और कुशा का घर-मकान या आश्रम-कुटिया हो तो परमाणु बम का भी उस पर प्रभाव नहीं हो सकता है। गायों में अनन्त शक्ति निहित है। गाय के गोबर, ऊपलों (कंडों) की राख से बीमारियों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। एकबार हमने (श्रीबाबामहाराजने) विदेशी-लेख पढ़ा था जिसमें एक विदेशी ने लिखा था कि भारत के लोग बड़े वैज्ञानिक हैं, मैं वहाँ के गाँवों में गया तो देखा कि गाय के गोबर का चौका लग रहा है जो सबसे अधिक पवित्र, मंगलकारी है। गोबर, राख से कोई भी बीमारी के कीटाणु नहीं आ सकते हैं। चौदह (१४) चीजें निकलीं हैं समुद्र-मंथन से, उसमें अमृत भी है और गाय भी है, इनका जोड़ा है, यदि तुम गौ-सेवा करोगे तो निश्चिय तुमको अमृतत्त्व की प्राप्ति होगी (ये प्रमाण है कि गाय की सेवा से अमृतत्त्व की प्राप्ति होती है) और यदि नहीं करोगे तो विष-प्राप्ति होगी, काल के गाल में जाओगे 'मृत्यु के वश में होकर संसार में भटकना पड़ेगा'।

कलियुग फैल रहा है चारों ओर, ये संसार मौत की ओर जा रहा है। बहुत से लोग कहते हैं कि विश्वयुद्ध होने वाला है, परमाणविक-युद्ध होने वाला है, ये सब क्यों कहते हैं ? क्योंकि गौ-विहीन समाज है। जो गौ-भक्त हैं वो अपनी ही रक्षा नहीं, सारे संसार की रक्षा कर रहे हैं।

"जो गौ-भक्त नहीं है वो विनाश की ओर जा रहा है, निश्चित मरेगा और जो गौ-भक्त है वो अवश्य अमृतत्त्व को प्राप्त करेगा, केवल वह ही नहीं उसके पुरखे, २१ पीढ़ियाँ तर जायेगी। गौ-सेवा कभी व्यर्थ नहीं जाती है।" स्वयं भगवान् ने इस बात को अनेक बार कहा है।

जिस दिन से गोपाल ब्रज में आये (प्रकट हुए) उसी दिन से विजय शुरू हो गई, जिस रातको आये, उसी रात को जेल के फाटक खुल गए, सब ताले अपने आप टूट गये। जहाँ गोपाल हैं वहीं विजय है। जिस समय पूतना ब्रज में श्री कृष्ण को मारने के लिए आई तो कृष्ण ने उसके पयपान से ही प्राणपान कर लिए। पूतना के उस विकराल स्वरूप को देखकर यशोदा मैया तो भयभीत हो गई, दौड़कर गई, लाला को गोद में लेकर गौ-खिरक में आई और अपने लाड़ले कन्हैया की अलाय-वलाय (संकट) से रक्षा के लिए गोपियों से कहा कि गैया की पूँछ लाओ। ब्रजगोपियों ने गैया की पूँछ लेकर के कृष्ण के चारों तरफ फिराई, पूँछ का झाड़ा दिया और कवच पाठ किया भगवन्नाम का। तो भगवन्नाम स्वयं भगवान् की रक्षा करता है, गायें स्वयं गोपाल की रक्षा करती हैं।

आज भी ब्रजवासी गायों की पूजा करते हैं, पूँछों से झाड़ा देते हैं।

यहाँ तक कि एकबार श्री कृष्ण ने नंदबाबा से कहा कि बाबा ! इन्द्र आदि देवों की पूजा करने की जरूरत नहीं है क्योंकि

**सर्वे देवाः गवामङ्गे तीर्थाणि तत्पदेषु च ।**
**तद् गुह्येषु स्वयं लक्ष्मीस्तिष्ठत्येव सदार्पितः ।।**

(महाभारत)

सभी देवता गायों के अंग में रहते हैं, सभी तीर्थ गायों के चरणों (खुरों) में रहते हैं और गाय के गोबर में स्वयं लक्ष्मीजी का निवास है। इसलिए हे बाबा ! तुम गौ-यज्ञ करो।

**अयाजयद्गोसवेन गोपराजं द्विजोत्तमैः।**
**वित्तस्य चोरुभारस्य चिकीर्षन् सद् व्ययं विभुः।।**

(भागवत ३/२/३२)

भगवान् ने गौ-महोत्सव (गिरिराज-यज्ञ) इसीलिये करवाया कि गिरिराजजी की तलहटी में गायें आवें, जिससे गायों को खूब चारा (हरी-भरी घास चरने को) मिले। **"गाः वर्द्धयति इति गोवर्द्धनं"** जो गायों की वृद्धि करता है उसका नाम 'गोवर्द्धन' है। तो भगवान् ने नंदबाबा से कहा कि बाबा ! गायों का ही यज्ञ करो, किसी देवता का मत करो क्योंकि देवता तो असक्षम-अस्थायी हैं। आज देवता हैं, कल गद्दी से निकाल दिए जायेंगे, जब कर्महीन हो जाते हैं तो असुर लोग जीत लेते हैं, इनकी गद्दी लुढ़कती हुई है, थोड़ी देर में लुढ़क जाती है।

इसलिए तुम गौ-उत्सव 'गायों का यज्ञ' करो, ये यज्ञ कभी नष्ट नहीं होता, इनकी गद्दी कभी खाली नहीं होती। गाय के गोबर में लक्ष्मी है जो कभी नहीं जाएगी, इनकी गद्दी सदा एक-सी रहती है। उत्तम ब्राह्मणों से गायों की पूजा

करो। क्योंकि ब्रज में गायों की सेवा से धन बहुत बढ़ गया था। 'वित्तस्य चोरुभारस्य' ब्रज में इतना धन बढ़ गया कि कृष्ण को चिन्ता हो गई कि इसे जल्दी कैसे खर्च कराया जाए ?

नंदबाबा के बढ़े हुए वित्त (धन) का सद्व्यय (सदुपयोग) कराने के लिए श्री कृष्ण ने गोवर्द्धन-पूजन (गौ-यज्ञ) करवाया।

धन एक बोझ है, धन बढ़ गया तो निश्चय पाप बढ़ गया, उस धन को नहीं संभालोगे तो पाप ले बैठेगा। 'चिकीर्षन् सद् व्ययं विभु:' उसका इलाज है कि धन बढ़ गया तो धर्म में लगा दो। धर्म में लगाने से पैसा बढ़ता जाएगा और सुरक्षा भी बढ़ती जाएगी।

**लक्ष्मी के सुत चार हैं धर्म, अग्नि, नृप, चोर।**
**धर्म हेतु खर्चे नहीं तो तीन करें भड़फोर।।**

इसलिए श्यामसुन्दर ने गोवर्द्धन-यज्ञ करवाया।

सूरदासजी ने एक पद (गोवर्द्धन-लीला) में लिखा है कि जिस समय गिरिराजजी का यज्ञ हुआ तो वहाँ पचास कोस के बीच में डेरा-तम्बू ही थे, बहुत बड़ा गौ-यज्ञ था, दुनिया भर के लोग आये और खूब प्रसाद पाया, इतना प्रसाद था कि बीता ही नहीं कभी। भगवद्-समर्पित वस्तु दिव्य स्वादमय व अक्षय-अमोघ हो जाती है। इसका जीता-जागता प्रमाण है 'श्रीराधारसमन्दिर, गहवरवन' जहाँ प्रतिदिन लगभग एक हजार भक्तजन प्रसाद पाते हैं और श्रीराधारानीब्रजयात्रा व राधाष्टमी, रंगीली होली आदि महोत्सवों में तो हजारों भक्तगण प्रसाद ग्रहण करते हैं, जो पूर्णत: नि:शुल्क-निष्काम सेवा है।

मन, वाणी, कर्म से सब कुछ भगवान् के लिए करना ही भक्ति है। सर्वात्मसमर्पण से प्रारब्धकर्म व सांसारिक वासनायें भी समूलत: नष्ट हो जाती हैं।

गौ-सेवा एक बहुत बड़ा यज्ञ है, इसे भक्तिभावपूर्वक करने से सहज ही श्री बढ़ती है, भक्ति बढ़ती है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है 'श्रीमानमन्दिर की माताजी गौशाला' जहाँ लगभग ४५ हजार से अधिक गायों का मातृवत् पालन-पोषण हो रहा है और कभी किसी से कुछ भी माँगा नहीं जाता है, केवल एकमात्र भगवान् के आश्रय (निष्काम हरिनाम-संकीर्तन) से चल रही है।

श्रीबाबामहाराज कहते हैं कि जीव में कोई सामर्थ्य नहीं है। ये सभी ब्रजसेवा-कार्य (श्रीराधारानी ब्रजयात्रा, श्रीमाताजीगौशाला, ब्रज के वन, पर्वत, कुण्डों का जीर्णोद्धार आदि बड़े-बड़े कार्य) केवल भगवान् की आराधना से हो रहे हैं। पूज्यश्रीबाबामहाराज ब्रजभूमि में लगभग ६५ वर्षों से सुदृढ़निष्ठापूर्वक नित्य भगवद्-आराधन कर रहे हैं।

आज हमलोगों का विश्वास नहीं है, इसी बात का दु:ख है, जनता नास्तिक हो गई है। कलियुग ने सबसे बड़ी चोट साधुओं और ब्राह्मणों पर की, यही सबसे बड़े धर्म-स्तम्भ हैं जिनको कलियुग ने गिरा दिया।

**तप: शौचं दया सत्यमिति पादा: कृते कृता: ।**
**अधर्माशैस्त्रयो भग्ना: स्मयसङ्गमदैस्तव ।।**

(भागवत १/१७/२४)

हम जैसे साधुओं में त्याग नहीं रहा और ब्राह्मणों में लोभ घुस गया।

लेकिन जहाँ सच्चाई की भक्ति है, वहाँ कलियुग कुछ नहीं कर सकता।

"गौ-भक्ति, भागवतभक्ति, भगवद्-भक्ति से ही सर्वसमृद्धि व सर्वमंगल होता है।"

गायों की भक्ति स्वयं श्रीश्यामसुन्दर ने की, जिसके लिए गोपाल बने, ग्वारिया का वेष धारण किया। गाय के जैसा दयालु कोई नहीं है, ये सबका पालन करती है, इसलिए सबकी माँ है। अपनी सगी 'खास' माँ तो कुछ महीने दूध देती है। गौमाता जीवन भर दूध देती है, अत: सच्ची दयामयी माँ है। इसलिए जो लोग गाय की सेवा करते हैं, वो बहुत ही बड़भागी हैं, लेकिन करते कौन हैं ? जो भक्त हैं। जो भक्त नहीं हैं वो गौशाला के नाम पर पैसा कमाते हैं, गौशाला का चन्दा खा जाते हैं, गौओं के साथ भक्तिभाव नहीं, अत्याचार करते हैं क्योंकि उनमें भक्ति नहीं है, इसलिए वे नाममात्र के सेवक हैं, केवल वेतनभोगी हैं। जो गौ-भक्त नहीं है वो संत नहीं है, मैं उसको कृष्ण-भक्त नहीं मानता हूँ, वो तो कंसवंशी है। गौ-सेवा से अवश्य ही भक्ति का पोषण होता है। इसलिए साधु-संतों-भक्तजनों को विशेष गायों से प्रेम रखना चाहिए क्योंकि उन्हीं के लिए भगवान् का अवतार होता है, स्वयं भगवान् भी गायों की सेवा करते हैं। 'गोपाल की गौचारण-लीला' माधुर्य व ब्रजप्रेम-पद्धति की परिचायक है। अत: गौ-संवर्द्धन से ब्रज की संस्कृति-सभ्यता का संवर्द्धन होगा, जिसमें विश्व-मंगल निहित है।

❑❑❑

*(शेष अगले अंक में)*

# कृष्णप्रेममयी रानीरत्नावती

श्रीबाबामहाराज के "एकादशी-सत्संग" (२३/०९/२००७) से संकलित

संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी गौरीजी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

राजस्थान के प्रतापी राजा मानसिंह, जिनके कारण अकबर ने सम्पूर्ण भारत पर राज्य किया था, उनके छोटे भाई माधव सिंह की पत्नी रानी रत्नावती एक ऐसी महान वीर भक्ता हुई हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता है। इतनी हिम्मत तो किसी पुरुष में भी नहीं हो सकती और साधु-संतों में भी नहीं हो सकती जैसी इन देवियों ने वीरता दिखाई । कुछ स्त्रियाँ ऐसी हुई हैं जिनको संसार हरा नहीं पाया । जैसे - मीराबाई को न जाने कितनी बार मारने का प्रयास किया गया, उन्हें जहर दिया गया और जहरीली शैया पर सुलाया गया लेकिन उनसे मौत भी हार गयी । जैसे प्रह्लादजी को मारने की बहुत कोशिश की गई फिर भी वह नहीं मरे, वैसे ही इन देवियों ने भी वह चमत्कार दिखाया जो प्रह्लादजी ने दिखाया था । वही चमत्कार रानी रत्नावतीजी ने भी कलियुग में दिखाया, ऐसी भक्ति होनी चाहिए । जब भगवान् दया करतें हैं तो न जाने कहाँ से कर देते हैं ? एक नौकरानी (दासी) से इनको भक्ति मिली, भक्त संग से भक्ति मिलती है । रत्नावती की एक नौकरानी थी, वह भक्त थी । उसको रात में नींद नहीं आती थी, वह गोपाल-गोपाल बुलाती थी । जो भक्त होते हैं, उनको न नींद आती है और न ही भोजन से प्रेम होता है । वे तो कृष्ण के लिए जीते हैं और कृष्ण को एक क्षण के लिए भी नहीं भूलते हैं । भगवान् उनके नचाये नाचते हैं, ऐसा प्रेम होना चाहिए । रात भर वह दासी गोपाल को बड़े दर्द के साथ बुलाती थी । वह नीचे अलग सोती थी लेकिन उसकी आवाज रात में रानी साहब के पास पहुँच जाती थी । उसकी दर्द भरी आवाज को सुन कर रानी साहब पूछती थीं कि इस दासी को क्या तकलीफ है ? रात भर नहीं सोती है, हमारी सबसे प्यारी दासी होकर के ये रात भर क्या चिल्लाती है ? दासी थोड़ी-थोड़ी देर में करवट बदलती थी और गोपाल को बुलाती थी । एकदिन रानी ने उसे रात में बुलाया और पूछा कि तुम्हें क्या तकलीफ है ? उसने कहा- "रानी साहब ! मुझे कुछ तकलीफ नहीं है ।" तो रानी ने कहा कि फिर रात भर चिल्लाती क्यों हो ? मुझे तेरी आवाज में दर्द दिखाई पड़ता है । कोई बीमारी हो तो इलाज करा दूँ । दासी बोली- "मुझे कोई बीमारी नहीं है ।" रानी ने कहा कि धन चाहिए तो धन ले ले । दासी हँस गई और बोली नहीं मुझे धन नहीं चाहिए । तो रानी ने कहा कि क्या चाहिए ? सोना, चांदी, हीरे, मोती आदि जो चाहिए मुझसे माँग ले लेकिन रात में चिल्लाना छोड़ दे, तू रात भर चिल्लाती है, तेरी आवाज में ऐसा दर्द छिपा है कि मैं क्या बताऊँ, अपने दु:ख को क्यों छिपाती है? ले जा, जितना चाहिए सोना-चांदी, हीरे-मोती क्या चाहिए ? बता क्या लेगी ? तू अगर कहे तो मैं अपना नौ लखा हार अभी दे दूँ, लेकिन वह दासी सोने, चाँदी, हीरे, मोती आदि सब लेने को मना करती गयी । जैसे-जैसे भक्त छोड़ता है वैसे-वैसे माया और लोभ देती है । रानी ने कहा - ले नौ लखा हार, ऐसा हार हिन्दुस्तान में कहीं नहीं है, लेकिन उसने हाथ जोड़ कर मना कर दिया और बोली कि रानी साहब मैं नौ लखा हार के लिए नहीं रोती हूँ । रानी ने पूछा तो क्या कारण है, तू क्यों रोती है ? दासी ने कहा कि मुझे जो चाहिए वह आप नहीं दे सकती हैं । रत्नावती ने कहा- "मैं रानी हूँ, जमीन-जागीर ले ले, जो चाहिए ले ले, मैं क्या नहीं दे सकती हूँ ? दासी बोली- "आप नहीं दे सकती हैं ।" रानी ने कहा- "तू माँग कर तो देख, मैं अभी देती हूँ ।" दासी ने कहा कि रानी साहब ! क्या आप मुझे गोपाल को दे सकती हैं ? रानी ने पूछा कि कैसा गोपाल ? दासी बोली- "वही जो सारे संसार को चला रहा है । जिसने हमको-तुमको बनाया, वही जो सारे संसार का मालिक है ।" रानी बोली- "अच्छा ! तू गोपाल के विरह में गाती और नाचती है, वह कहाँ रहता है ?" दासी बोली- "वह ब्रज में रहता है, वहाँ लीला करता है ।" अब रानी दासी की बात सुनने लगी । देखो - भक्ति कहाँ से मिलती है, कुछ पता नहीं पड़ता । रानी को अपनी दासी से भक्ति मिली । दासी का उपदेश सुनकर रानी बोली- "अरे ! गोपाल ऐसा है ।" दासी बोली- "हाँ, जब ब्रह्माजी ने गोपाल के बछड़े और ग्वालबाल चुराए थे तो उन्होंने अनेक ब्रह्मा, अनेक विष्णु दिखाए, अनन्त संसार दिखाया, हमारा गोपाल ऐसा है ।" दासी के मुख से गोपाल की कथा सुनते-सुनते रानी भक्त बन गयी और दासी उसकी गुरु बन गई । 'रानी' दासी से बोली कि तेरी सेवा यही है कि अब तू कृष्ण की कथा सुनाया कर । क्या गोपाल मिलता भी है ? दासी बोली- "हाँ रानी साहब ! मिलता है ।" रानी ने पूछा कि कैसे मिलता है ? तब दासी ने प्रह्लाद, ध्रुव, गोपियों की कथा सुनाई । रानी सुनती गयी, सुनती गयी, सुनती गयी ..... और भक्त बन गयी । वस्तुत: यही तो बात है कि वीर आदमी ही भक्त बनता है, जो त्याग कर सकता है । हम जैसे लोग जो पैसे और संसार की आसक्ति रखते हैं, वे भक्त नहीं बन सकते ।

**कामी, क्रोधी, लालची इनसों भक्ति न होय ।**
**भक्ति करे कोई सूरमा जाति, वरण, कुल खोय॥**

भगवान् राम ने कहा था- शबरी इस वन में हजारों ऋषि रह रहे हैं लेकिन तू ही भक्त है ।

**कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता ॥**
**जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुन चतुराई ॥**
**भगति हीन नर सोहइ कैसा । बिनु जल बारिद देखिअ जैसा ॥**

(रा.मा.अरण्य.-३५)

ये जाति, ये हमारा कुटुंब, ये हमारा मान-सम्मान आदि को सोचने वाला भक्त नहीं हो सकता। लेकिन रानी वीर थीं, इसलिए बोलीं कि हमको भी गोपाल से मिलना है। दासी ने कहा कि गोपाल से मिलना कठिन भी है और सरल भी है। जब आदमी सबकी ममता छोड़ देता है, एकमात्र गोपाल से ही प्यार करता है, तब वह मिलता है। इधर-उधर का थोड़ा भी प्रेम रहता है तो मामला गड़बड़ हो जाता है। रानी बोली कि मुझे मिलना है। तो दासी ने पूछा कि क्या आप रानीपना छोड़ सकती हो? तो रानी ने कहा कि अभी मैंने छोड़ दिया? अरे! जब जीवन जा रहा है, कल मर जायेंगे हम सभी तो फिर भगवान् से कब मिलेंगे, इसलिए मैंने आज से ही सब कुछ छोड़ दिया। दासी बोली- "तो आप कीर्तन करिए ।" कीर्तन शुरू हो गया और ऐसा हुआ कि अब दिन-रात महल में कीर्तन ही होने लगा। एकदिन रानी रत्नावती उस दासी के पाँव में गिर पड़ीं और बोलीं कि दासी! गोपाल नहीं मिले, गोपाल कब मिलेंगे? दासी बोली- "रानी साहब! अभी तो आप रानीपन की बेड़ी में जकड़ी हुई हैं, घूँघट में हैं, इस बेड़ी को तोड़ दो और गोपी बन जाओ।" रानी ने पूछा- "गोपी बनूँ, वह कैसे ?" दासी ने कहा- "गोपियों ने सब लोक-लाज छोड़ दी थी, आप तो अभी रानी साहब हैं। आपके महल में भक्तजन आ भी नहीं सकते हैं।" रानी ने सेवकों से कहा- "अच्छा! तुमलोग जाओ, हमारे नगर में जितने भी कीर्तन करने वाले भक्त हैं, सबसे कह आओ कि आज रानी रत्नावती के महल में कीर्तन है, सब आ जाओ, आज कोई पहरा नहीं रहेगा।" (राजा माधव सिंह जी उस समय दिल्ली में थे लेकिन वह भक्त नहीं थे, अगर वह यहाँ होते तो ये सब न होता । राजा के न रहने पर रानी का हुकुम चलता है।) लोग गए और नगर में जितनी भी कीर्तन मण्डलियाँ थी, सबसे कह दिया कि रानी साहब के महल में कीर्तन के लिए सभी आ जाओ । सैकड़ों भक्त आ गए, वे बड़े खुश थे और बोले - आज ये क्या हुआ ? हम लोग तो महल में घुस नहीं सकते थे और आज महल में कीर्तन है ! सब मंडलियाँ इकट्ठी होकर महल में आयीं। उधर रानी साहब मामूली से चिक के पर्दे के भीतर बैठीं हुई थीं । लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ, ऐसा तो आज तक कभी नहीं हुआ था। (अभी आप लोग सोच नहीं सकते हैं कि प्राचीन काल में रानियों को कितना पर्दा करना पड़ता था ? जब वे गंगा नहाने जातीं थी तो कोसों तक कनात लग जाती थी, कोई उनका पाँव भी नहीं देख पाता था।) उधर रानी रत्नावती के महल में कीर्तन-मंडली के भक्तों द्वारा जब बड़े जोर से कीर्तन जमा तो चिक फाड़कर रानी साहब बाहर निकल पड़ीं और कीर्तन-सभा में जाकर नाचने लगीं । अब तो हल्ला मच गया । जो बुराई करने वाले आसुरी प्रकति के दुष्ट लोग होते हैं, उनको मौका मिल गया, वे तो मौका देखते हैं ।

**पापवंत कर सहज सुभाऊ । भजनु मोर तेहि भाव न काऊ ।।**

(रा. मा. सु. - ४४)

रावण को हनुमानजी (महादेवजी) ने बहुत शिक्षा दिया, हाथ जोड़ कर कहा

**बिनती करउँ जोरि कर रावन । सुनहु मान तजि मोर सिखावन ।।**

(रा.मा.सु.-२२)

लेकिन हाथ जोड़ो, पाँव छुओ, जिसके पाप हैं उसको कभी भजन में रुचि तो होगी नहीं, वह तो सदा विरोध करता रहता है, समझ लो कि वह असुर है, चाहे वह लाल कपड़े वाला है, चाहे सफेद कपड़े वाला है । लोग पहुँचे दिल्ली में और राजा माधव सिंह से कहा कि महाराज आज तो आपकी नाक कट गयी, राजवंश की नाक कट गयी । राजा साहब बोले- "क्या हुआ ?" मंत्री लोग बोले- "रानी साहब ने आज सारे नगर की कीर्तन- मंडलियाँ महल में बुलाई ।" राजा आश्चर्य से बोले- "अरे ! महल में बुलाया, तुम लोग क्या मर गए थे ?" मंत्री बोले कि हम क्या करते, वह महारानी हैं । राजा ने पूछा- "फिर और क्या हुआ ?" मंत्री बोले- "रानी साहब चिक के भीतर बैठीं थीं और जैसे ही कीर्तन शुरू हुआ, वह चिक को फाड़कर निकलीं और राजा साहब ! अगर आप माफ करें तो एक बात कहें कि वह घूँघट खोल के नाचीं ।" इतना सुनते ही राजा साहब ने तलवार निकाल लिया, उतने में ही उनका लड़का प्रेम सिंह वहीं आ गया, लेकिन वह भक्त था क्योंकि अपनी माता के रंग में रंगा था, वह इस खुशी में आया कि आज हमारी माँ ने गोपियों की तरह सबके बीच में नृत्य किया । बड़ी ही प्रसन्नता से प्रेमसिंह ने राजा साहब के पाँव छुए, तो राजा बड़े गुस्से में बोले अरे ऐ, मुड़िये (मुण्डी) के भाग (निकल) यहाँ से । ('मुण्डी' माने बाई, जो मूँड़ मुड़ा लेती हैं ।) यानि माँ का दण्ड बेटे को मिला । परन्तु प्रेमसिंह तो सुदृढ़-साहसी भक्त था (ऐसा नहीं था कि लुढ़कना लोटा हो) । प्रेम सिंह ने कहा- "पिताजी क्या कह रहे हैं आप ?" राजा बोले- "तू मुण्डी का है, जल्दी हमारे आँख से दूर हो जा तो चला गया

❑❑❑

# विशुद्ध प्रेम की पहिचान

श्रीबाबामहाराज के प्रवचन "गोपी गीत" (२६/०७/१९९७)से संकलित

संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी चन्द्रमुखी जी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

ब्रजगोपियाँ श्रीश्यामसुन्दर से कहती हैं-

**नन्द के तोय खिलौना लै दऊँगी, मेरे अँगना में मुरली बजाय ॥**
**मैं दऊँगी तोय माखन-मिश्री लाला, नैक संग-संग मोहि नचाय ॥**
**साँवरिया प्यारे मुरली में राधे -राधे गाय.....**
**मैं दधि बेचन जाऊँ वृन्दावन, मोहि मिलियो कदम्ब की छाँह ॥**
**चन्द्र सखी भज बाल कृष्ण छवि, मैं तेरी बलि जाऊँ ॥ नन्द के .....**

ये है गोपीजनों का प्रेम। भगवान् ने स्वयं श्रीमद्भागवतजी में कहा है कि गोपीजन तो बहुत ऊँची बात है, एक साधारण-सा जीव भी जिसके अंदर थोड़ा-सा प्रेम आ जाए, फिर वह अपने हृदय से धक्का मार के निकाले तो भी मैं (भगवान्) नहीं जाऊँगा।' ये बात स्वयं श्रीभगवान् कहते हैं

**सकलभुवनमध्ये निर्धनास्तेऽपि धन्या, निवसति हृदि येषां श्री हरेर्भक्तिरेका ।**
**हरिरपि निजलोकं सर्वथातो विहाय, प्रविशति हृदि तेषां भक्तिसूत्रोपनद्धः ॥**

(श्रीपद्मपुराण, उत्तरखण्ड, भागवत-माहात्म्य ३/७३)

इस संसार में कोई बहुत गरीब है, जिसके पास रोटी नहीं, कपड़ा नहीं, मकान नहीं, बड़े-बड़े परमहंस महात्मा पेड़ों के नीचे पड़े रहते हैं, उनसे ज्यादा गरीब कौन होगा ? साधु भिक्षा माँगता है दूसरों के दरवाजे पर जाकर, लेकिन उसके आगे इन्द्र भी झुकता है, देवता भी झुकते हैं, क्यों ? क्योंकि उसके हृदय में प्रेमधन होता है, जो सबसे बड़ा धन है, जो इन्द्र के पास नहीं है। सच्चे प्रेमी भक्त की पहिचान स्वयं भगवान् ने बताई है

**तुल्यनिन्दा स्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित्।**
**अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः॥**

(श्रीमद्भगवद्गीता १२/१९)

(ये भगवान् की वाणी हम लोगों को भवसागर से छुड़ाने वाली है।) विशुद्ध भक्ति किसमें है ? जो निन्दा और स्तुति में समान है। 'तुल्यनिन्दा स्तुतिः'। 'निन्दा' माने हमारी कोई बुराई कर रहा है और 'स्तुति' माने कोई तारीफ कर रहा है, दोनों बराबर हैं - बुराई सुनके नाराज न हो और तारीफ सुनकर के खुश मत होय ये बात छोटी-सी लगती है लेकिन बहुत बड़ी बात है, अगर भगवान् की एक बात भी कोई जीवन में उतार ले तो भवसागर से पार हो जाय। जैसे - कोई बुराई कर रहा है और आपने ध्यान नहीं दिया, शान्त रहे तो उससे आपका द्वेष (बैर) नहीं होगा। कोई तारीफ कर रहा है और तुम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो उससे राग या आसक्ति नहीं होगी, इस तरह राग-द्वेष से छूट जाओगे। लेकिन एक बात भी उतरती नहीं है जीवन में, हमलोग तारीफ करने वाले से तो चिपकते हैं, बहुत प्रसन्न होते हैं और बुराई करने वाले से सौ-सौ गुना बैर करते हैं, इस तरह से राग-द्वेष में अंधे हो जाते हैं, इसे समझना चाहिए कि हम गलत कर रहे हैं, जहर खा रहे हैं। कल्याण की बात को अच्छी तरह से बार-बार सुनो, समझो। चिकनी-चुपड़ी मीठी बातों से कल्याण नहीं होता है हम तुम्हारी तारीफ कर दें कि आप तो बड़े भक्त हैं और आपने कहा कि अरे ! आप तो सिद्ध पुरुष हैं। हम अपने को सिद्ध समझकर प्रसन्न होते हैं और आप भी स्वयं को भगतराज मानकर खुश होते हैं, ये सब भगवान् की भक्ति में बहुत बड़ा धोखा है, जिससे देह-गेह में अहंता-ममता बढ़ती है। मान-सम्मान आदि की कामना अहंकार का पोषण कर 'देहासक्ति' बढ़ाती है जो विशुद्ध भक्ति में बाधक है। सांसारिक वासनायें संसार में फँसाती हैं। कल्याण तो तभी होगा जब ये कहो कि भगत जी ! आप कामनाओं को छोड़ो, आसक्ति, अहंता-ममता को छोड़ो, विषय-भोगों को छोड़ो, भगवान् की शरण में जाओ, विशुद्ध प्रेममयी (भावमयी) भक्ति करो, केवल भाव (प्रेम) से ही भगवान् रीझते हैं।

**रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा॥**

(रा.मा.अयो.- १३७)

**हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥**

(रा.मा. बा. - १८५)

**मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा । किएँ जोग तप ग्यान बिरागा॥**

(रा.मा. उ. - ६२)

इसलिए भगवान् बोले कि बुराई करने वाले और प्रशंसा करने वाले से तुल्य 'समान' रहो। 'मौनी' माने मौन रहो (मन में काम, क्रोध आदि विकारों की लहरें न आवें, इसी को 'मौन' कहते हैं।) **'संतुष्टो येन केनचित्'** जो मिल गया उसमें संतोष कर लो। 'संतोष' माने जो दिया है प्रभु ने उसमें प्रसन्न रहो। अनेक तरह की इच्छाओं से भक्ति नष्ट हो जाती है।

कबीरदासजी गृहस्थ थे लेकिन परम संतोषी भक्त थे। उनके एक स्त्री और कमाल, कमाली नामक दो संतानें थीं जो मैथुनी भोग से उत्पन्न नहीं हुए थे। उनके पास मकान नहीं था, एक टूटी-सी झोपड़ी थी। एकबार बड़ी तेज हवा (आंधी) में उनकी कुटिया उखड़ गई, तब कबीरदासजी और स्त्री-बच्चे झाँझ लेकर कीर्तन करने लग गये और फिर वर्षा होने लगी। ऐसी स्थिति में देखने वाले लोग उनकी हँसी उड़ाने लगे कि देख लो कीर्तन करने का यही फल है। परन्तु परम निष्किंचन भक्त कबीरदासजी ने कहा-

**गगन गरज बरसै अमिय, बादर गहर गंभीर।**
**चहुँ दिसि दमकै दामिनी, भीजै दास कबीर॥**

"देखो तो **'गगन गरज'** आकाश में गर्जना हो रही है, **'बरसै अमिय'** ये पानी नहीं अमृत बरस रहा है भगवान् का, **'बादर गहर गंभीर'** काले-काले बादल आकाश में छा रहे हैं, ये सब भगवान् का स्वरूप हैं जो अमृत बरसा रहे हैं। (ये बादल भगवान् हैं जो अमृत स्वरूप जल बरसाकर जीवनदान देते हैं जीवों को, यदि पानी नहीं बरसे तो दुनिया भूखी मर जाएगी।) **'चहुँ दिसि दमकै दामिनी'** आकाश में चारों तरफ बिजली चमक रही है, ये हमारे प्यारे प्रभु का चमत्कार है। **'भीजै दास कबीर'** (भक्तजन कीर्तन करते हैं जिससे वे भगवद्रसामृत में भीगते हैं) कबीरदास जी कहते हैं कि आज हमको भगवान् के अमृत में भीजने का मौका मिला है। हे प्रभु! धन्य है ... धन्य है ... आज हम दिव्य अमृत में भीग रहे हैं।" ये भक्त का सहज प्रेममय भाव है, इसको संतोष कहते हैं।

'जहाँ भोग है, वहाँ प्रेम नहीं है।' ये हमेशा याद रखो, यह बात हम लोगों को रोज, हर समय (२४ घंटे) सुननी चाहिए, क्योंकि यही एक ऐसी वस्तु है जो हमको भगवान् से अलग कर रही है, इस पशु-धर्म से बचने के लिए ही भगवान् ने हमें मनुष्य बनाया है। इस देह से दिव्य तप (भगवान् की आराधना) करें जिससे पवित्र अन्तःकरण होकर भगवान् के अनन्त प्रेमानन्द की प्राप्ति हो जाय। ये शरीर मल-मूत्र भोगने के लिए नहीं है

**नायं देहो देहभाजां नृलोके कष्टान् कामानर्हते विड्भुजां ये।**
**तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्त्वं शुद्धयेद्यस्माद् ब्रह्मसौख्यं त्वनन्तम्॥**

(भागवत ५/५/१)

भगवान कहते हैं - **'नायं देहो देहभाजां नृलोके '** हमने तुमको मनुष्य बनाया किसलिए ? **'कष्टान कामानर्हते'** क्या कष्टमय कामनाओं के लिए ? क्या मल-मूत्र के भोगों के लिए ? अरे, मनुष्य बनने के बाद शूकर मत बनो। 'विड्भुजां' इन भोगों को तो सुअर भी भोगता है, मनुष्य वह है जो इनका त्याग करता है। 'तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्त्वं' ऋषभ भगवान् बोले - हे मेरे पुत्रो ! (भगवान् ने हम लोगों को पुत्र कहा) तुम हमारी संतान हो, तपस्या करो, जिससे तुम्हारा हृदय शीशे की तरह स्वच्छ हो जाए और हमारा प्रेम प्रकट हो जाए। तपस्या का मतलब ये नहीं कि खाना-पीना छोड़ दो, ऐसा ज्ञान लाओ हृदय में कि तुम्हारा मन शुद्ध हो जाए और मन के शुद्ध होते ही 'ब्रह्मसौख्यम्' तुमको प्रेम की प्राप्ति अपने आप हो जाएगी। मनुष्य वह है जो भोगों को छोड़ता है, जो विषयों को पकड़ता है, वह तो पशु है और उसको पशु-बुद्धि वाले ही बड़ा मानते हैं। जिन्हें विशुद्ध ज्ञान होकर भगवान् में प्रेम हो जाता है, वे इन विषयों को नहीं पकड़ते, इस जहर को नहीं खाते हैं। विश्वास करो कि ये बहुत बड़ा जहर है, जिसके पीछे हम लोगों ने कितने शरीर गँवा दिए पता नहीं। जहाँ-जहाँ गये यही किया, जिस योनि में गये, जिस शरीर में गये, जिस अवस्था में गये, ये विषय पीछा नहीं छोड़ते हैं, फिर भगवान् का प्रेम कैसे प्राप्त हो जाएगा? ये बातें संसार में नहीं हैं, संसार में तो केवल विष-चर्चा है। भगवान् ही अनेक रूपों में अवतार ले करके बताते हैं कि तुम हमारे पास आओ।

श्रीभगवान् की वाणी में

भगवान् कहते हैं कि जितने भी शरीर और इन्द्रियों के विषय-भोग हैं, ये टिकाऊ नहीं हैं, क्षण भंगुर हैं, इनसे शाश्वत सुख नहीं मिलता है, इसलिए इन अनित्य भोगों से सर्वथा अनासक्त हो जाओ।

**मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।**
**आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥**

(गीता २/१४)

ये जितने विषय हैं, इन्हें **'मात्रास्पर्श'** कहते हैं, इनको छूने से ही हम भोगते हैं, जैसे- लड्डू दूर से नहीं भोगोगे, जब तुम्हारी जिह्वा से स्पर्श होगा तब ही भोग होगा। किसी रूप को आँख की किरणों से छूते हैं, इसी तरह शब्द को कानों से छूते हैं, जब तक शब्द को सुनेंगे नहीं, भोग नहीं होगा। इसी तरह से त्वचा द्वारा स्त्री को छूते हैं, बिना छुए भोग नहीं होता। छूने वाले जितने भोग हैं इन्हें **'मात्रा स्पर्श'** कहते हैं, ये आने-जाने वाले (विनाशी, क्षणिक) भोग हैं। **'आगमापायिनो'** - **'आगम'** - आये, **'अपायी'** - चले गये। 'आये और चले गये' माने जवानी आई और थोड़ी देर में चली गई। **"रह गये बुढ़ऊ हाथ मीड़ते, अब गई जवानी नाय बगदे, चाहे कितहू लड्डुआ खाय।"** बड़े-बड़े पहलवान भी बुढ़ापे में ऐसे निष्क्रिय, शिथिल हो जाते हैं, जैसे कोई बूढ़ा बैल किसी काम का नहीं रहता। अरे मूर्ख, तू जवानी में बड़ा इतराता था, तब तूने नहीं सोचा, व्यर्थ ही समय गँवा दिया इधर-उधर घूमने में। सत्संग नहीं सुना, जिसके कारण अज्ञानी (विवेकहीन) बना रहा, ज्ञान होता तो इस शरीर को भजन में लगाता। शरीर के संस्पर्शज भोग 'भगवान्' से हटाने के लिए हमलोगों को धोखा देते हैं। संसार के विषय-सुख बादल की छाया हैं, इसको क्या पकड़ते हो ? बादल की छाया आई और थोड़ी देर में चली गई, ऐसे ही यह शरीर है, इसके सारे भोग धन-सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र आदि ये सब 'आगमापायिनो' हैं अर्थात् आए और चल दिये। हर चीज जा रही है, पानी की लहर बह रही है, उसको तुम पकड़ना चाहते हो, कैसे पकड़ सकते हो क्योंकि **'आगमापायिनो'** है। पुरुष कहता है कि ये हमारी स्त्री है, हम इसके साथ रहेंगे, स्त्री कहती है कि मैं तुम्हारे साथ रहूँगी लेकिन ये सब सम्बन्ध झूठ होने से बिछुड़ने वाले हैं। इसलिए "कोई किसी के साथ हमेशा नहीं रह सकता है" ये दुनिया का नियम है। फिर भी हम सदा साथ रहने के लिए हाथ पकड़ते हैं, अरे! हाथ क्या पकड़ते हो? जिस हाथ से तुम पकड़ते हो, वह हाथ भी तुम्हारा जा रहा है, ये हाथ-पाँव, शरीर भी एक दिन नहीं रहेंगे, कुछ नहीं रहेगा, हर चीज (आगमापायिनो, आगम आने वाली, अपायी जाने वाली) आने-जाने वाली है। जैसे - रेलगाड़ी पर बैठकर के आप बाहर की

ओर देखो - दूर.....सामने पेड़ दिखाई पड़ा, पास में आया, झट चला गया, कोई भी पेड़ पास आया, चला गया, आ रहा है-जा रहा है, इसी का नाम जीवन की गाड़ी (जीवन-सफर) है। संसार में हर चीज आ रही है और छूट रही है। तुम लोग सोचो - बचपन में तुम्हारे कितने मित्र थे, उस समय गुल्ली-डंडा भी खेलते थे, कंचा भी खेलते थे, न जाने क्या-क्या खेलते थे, लड़कियों की सहेलियाँ होती हैं, जो गुड्डा-गुड़ियों आदि का खेल खेलती थीं, लेकिन अब वह सब आई बात चली गई। कोई चीज टिकती नहीं है इस दुनिया में लेकिन मनुष्य उसको पकड़ता है, बस यहीं धोखा खाता है और इसे पकड़ने में ही मर जाता है, हाथ में कुछ नहीं आता है। भोग तू पकड़ता है, तू समझता है कि हमारा ब्याह हुआ, स्त्री आ गई, इसको हम पकड़ लें, परन्तु वह जा रही है या स्त्री जिस पुरुष को पकड़ती है, वह कहाँ रुकेगा ? जा रहा है-आ रहा है-जा रहा है। इसलिए भगवान् कहते हैं कि संसार के विषय-भोग अनित्य हैं, 'तांस्तितिक्षस्व' उसको सह लो, 'सह' माने उसमें मूर्ख नहीं बन। **'शीतोष्णसुखदुःखदाः"** - 'शीत' माने ठंडक, हर चीज थोड़ी देर के लिए ठंडक देती है, जैसे - स्त्री आई, उसका हाथ पकड़ा, पहला-पहला ब्याह था तो ऐसा लगा कि ये बड़ी ठंडी है, लेकिन नहीं, परिणाम क्या निकला ? 'उष्ण' जन्म भर जलते रहोगे। **'सुखदुःखदाः'** पहले लगता है कि सुख मिलेगा लेकिन पीछे दुःख मिलता है, ऐसा कोई नहीं जो इन विषय-भोगों से आज तक सुखी हुआ हो।

फिर आगे भगवान् कहते हैं जिनको ये मायिक-भोग सताते नहीं हैं (काम, क्रोध, लोभ आदि की लहरें नहीं आती हैं जिसके मन में) वह अमृतत्त्व को प्राप्त कर अमर हो जाता है अर्थात् अविनाशी पद (भगवद्प्रेम व धाम) को प्राप्त कर लेता है।

**यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।**
**समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते॥**

(गीता २/१५)

इस चलाचली की दुनिया में हर चीज जा रही है, इसमें वह आदमी अमर हो जाता है 'आनन्दस्वरूप भगवान् को प्राप्त कर लेता है', जिसको शरीर-संसार के संस्पर्शज भोग दिल पर चोट (व्यथा, पीड़ा) नहीं करते हैं, अपनी स्थिति से हटाते नहीं हैं। भोग-ऐश्वर्य में आसक्त लोग धन को देखकर के खुश हो जाते हैं, सुन्दर रूप को देखकर के खुश हो जाते हैं। प्रायः लोग लड़कियों के पीछे-पीछे घूमा करते हैं, नाम होता है कि हम दर्शन करने जा रहे हैं, परिक्रमा करने जा रहे हैं आगे-आगे लड़कियाँ जा रही हैं, पीछे-पीछे परिक्रमा वाले २-४ लड़के जा रहे हैं, जैसे - बिजार (सांड़) जा रहा हो गैया के पीछे .....। किसी ने पूछा - कहाँ जा रहे हैं ? बोले - परिक्रमा करने जा रहे हैं। अरे ! क्या इसी को परिक्रमा कहते हैं ? ये श्रीजी की परिक्रमा नहीं है, ये तो तुम लड़कियों की परिक्रमा लगा रहे हो, तुम मल-मूत्र की परिक्रमा लगा रहे हो और समझ रहे हो कि हम श्रीजी की परिक्रमा लगा रहे हैं, अरे ! कैसे अन्धे बन गये ? तुमको अपनी दशा का ज्ञान नहीं है। इसलिए तुम अपने-आप का स्वयं सुधार करो क्योंकि मन ही तुम्हारा मित्र व शत्रु है, मन जब भगवान् की ओर चलता है तो मित्र है, जब भगवान् से विमुख हो जाता है तो शत्रु है। इसलिए कबीरदास जी महाराज ने कहा है

**"मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।**
**मनहि मिलावत राम सों, मनहि करत फजीत॥"**

एक बार हमारे पास कुछ देवियाँ आई थीं तो हमने उनसे कहा कि आप भी भजन किया करो, तो वे बोलीं कि हमारे पिताजी बहुत बड़े भक्त हैं। हमने कहा कि ये तो बड़े खुशी की बात है, लेकिन वे बोलीं कि हम लोग निकुंज की उपासना करती हैं यानि हमारे ठाकुरजी केवल निकुंज में रहते हैं, इसलिए हम अन्य सम्प्रदायों की लीलाओं को नहीं पढ़ती हैं। हम समझ गये कि ये सम्प्रदायवाद की भी एक बीमारी है। हमने कहा- "देवियो ! आप कहती हो कि हम निकुंज की उपासना करती हैं, ये ईमानदारी से बता दो कि कितने सेकेंड, कितने मिनट आपका मन निकुंज में रहता है। हम लोग भी गाते हैं

**बसो रे मेरे नैनन में नंदलाल।**
**मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, गल वैजन्ती माल॥**

गा देते हैं लेकिन क्या हृदय में ये सब चीजें झूमती हैं, क्या हृदय में मोर-मुकुट या कुंडल आता है ? गाते हैं, आँख भी बंद करते हैं लेकिन मन नहीं टिकता है।" यह सुनकर वे सब लड़कियाँ चुप हो गयीं, पढ़ी-लिखी थीं लेकिन कुछ नहीं बोल पाईं। इसलिए इस धोखे में नहीं रहो कि हम अनन्य भक्त हैं, ज्ञान-भक्ति-वैराग्य आदि की सब बातों को सुनो, जहाँ से तुमको संसार से विरति हो। इस चक्कर में नहीं पड़ो कि हम ये नहीं सुनेंगे, वह नहीं सुनेंगे, ये संकीर्ण भावनाएँ हृदय को राग-द्वेष से भर देती हैं, अतः इस बीमारी से बचो।

मनुष्य मोह के अंधकर में भटक रहा है, उसे समझ ही नहीं है कि क्या सही है, क्या गलत है, क्या करें, क्या नहीं करें, दिन-रात राग-द्वेष की अग्नि में जल रहा है, इससे बचने के लिए निरन्तर सत्संग करना चाहिए, विशुद्ध संतों की वाणी का श्रवण, मनन, निदिध्यासन कर जीवन को मंगलमय बनाएँ।

**तबहि होइ सब संसय भंगा । जब बहु काल करिअ सतसंगा॥**
**बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग ।**
**मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग॥**

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड ६१)

❑❑❑

*क्रमशः....*

# मानिनी की नूपुर-ध्वनि से धन्यातिधन्य हुए मानबिहारी

श्रीबाबामहाराज के प्रवचन श्रीराधासुधानिधि (३०/०४/१९९८) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी माधुरीजी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

'कोई हमें श्रीराधारानी से मिला दे।' इस तीव्र उत्कंठित भाव से गहवरवन में श्रीश्यामसुन्दर खड़े थे। इतने में श्रीराधारानी आ रहीं थीं और ललिताजी छिपा रहीं थीं इस बात को, लेकिन श्रीकृष्ण जान गये क्योंकि इधर से श्रीजी महल (वृषभानु भवन) से पधार रहीं थीं, तो अंचल की हवा उड़कर श्यामसुन्दर के पास आती है तो उस सुगंध से समझ गये और बोलते हैं हे ललिते ! अरे विशाखे ! देखो, देखो हमें पता पड़ गया है कि श्रीराधारानी आ रही हैं। ललिताजी कहती हैं कि कैसे तुम कहते हो कि आ रही हैं ? श्यामसुन्दर कहते हैं कि देखो, मैं बताता हूँ

**देखि सखी राधा पुनि आवति।**
**नूपुर धुनि सुनियत निकट विकट, वीथिन कोऊ ऐसेहि गावति॥**

श्रीराधिका के चरणनूपुर साधारण नहीं हैं, रसिकों ने बताया है कि इनके चरणों के नूपुरों से शब्दब्रह्म का प्रकाश होता है।

**"श्रीराधा पद-पद्म में, नूपुर कलरव होय।"**

उनके चरणों में जो नूपुर बजते हैं, उसको शब्द-ब्रह्म कहा जाता है और जो महादेवजी का बनाया हुआ राधाकृपाकटाक्ष स्तोत्र है, 'ऊर्ध्वाम्नाय तंत्र' में शंकरजी ने पार्वतीजी को सिखाया है, उसमें कहा गया है

**अनेकमन्त्रनादमञ्जु नूपुरारवस्खलत् ।**
**समाज राजहंस वंश निक्वणाति गौरवे ।**
**विलोलहेमवल्लरी विडम्बिचारुचङ्क्रमे।**
**कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥१०॥**

श्रीकिशोरीजी के चरणों में नूपुर बजते हैं। जितने भी दिव्य मंत्र हैं वे सब उन्हीं चरण-कमलों से निकले हैं। इसीलिये कहा गया है 'नूपुर धुनि सुनियत निकट विकट' नूपुरों की आवाज सुनाई पड़ी, जो बड़ी मीठी थी और यहाँ तक कहा गया है कि उनके चरण-नूपुर-ध्वनि के आगे वंशी भी चुप हो जाती है।

**पादाङ्गुलीनिहितदृष्टिमपत्रपिष्णुं दूरादुदीक्ष्य रसिकेन्द्रमुखेन्दुबिम्बम्।**
**वीक्षे चलत्पदगतिं चरिताभिरामां झङ्कारनूपुरवतीं बत कर्हि राधाम्॥**

(रा.सु.नि.-१५)

**"झङ्कारनूपुरवतीं बत कर्हि राधाम्"** जब वह चलती हैं तो ऐसी अद्भुत झनकार ध्वनि उत्पन्न होती है कि जिसके आगे शब्द-ब्रह्म, अनेक मंत्र, वीणा, वंशी आदि सब उस सुंदरता-मधुरता के आगे शान्त हो जाते हैं। श्यामसुंदर उन्हीं नूपुरों की ध्वनि सुन रहे हैं और नूपुर-ध्वनि सुनने के बाद उनको ऐसा पता पड़ा कि कोई गा रही हैं। वस्तुतः दूर.....श्रीराधारानी कहीं गा रही थीं, जिनका सुंदर कंठ, जिनकी सुंदर आवाज, जिनके स्वरों की मिठास श्रीकृष्ण जानते हैं कि जब वे गाती हैं तो महारास में सन्नाटा छा जाता है। **'यद्यपि निकट कोटि कामिनि कुल।'** जिनके निकट कोटि-कोटि गोपियाँ रहती हैं, परन्तु जिस समय श्रीराधारानी गाती हैं तो उस गान की मधुरता का वर्णन कौन कर सकता है? जिस गान के आगे श्रीकृष्ण भी चुप हो जाते हैं। दूर से चलकर वह गह्वरवन की ओर आ रही थीं तो श्रीकृष्ण को पहले नूपुरों की ध्वनि सुनाई पड़ी, उसके बाद उनको श्रीराधारानी के मीठे-मीठे स्वर सुनाई पड़े वह ध्वनि, वह राग, वह मीठी आवाज उनके कर्ण-रंध्रों को पार कर गई। श्रीकृष्ण यहीं बैठ गये और कहते हैं- ललिता ! सुन नहीं रही हो, राधारानी आ रही हैं। उसके बाद तीसरी स्थिति थी उनके अंचल की हवा जो श्रीकृष्ण के पास पहुँचती है।

**'नूपुर धुनि सुनियत निकट विकट, वीथिन कोऊ ऐसेहि गावति॥**

ललिताजी कहती हैं- 'श्यामसुन्दर ! तुमको भ्रम है।' श्रीकृष्ण बोले कि नहीं ललिते ! सुनो, वह नूपुर सुनो, वह उनका संगीत सुनो और सबसे बड़ा प्रमाण है कि उनके अंचल-सुगंध को लेकर के जो वायु आ रही है, वह गौरांगी की दिव्य सुगन्ध, जिसके आगे अनेक कमल आदि पुष्पों की भी महक कुछ नहीं है। श्रीराधिका के अंग की सुगंध उनके अंचल की हवा से मिलकर के आ रही है, देखो

**गोरे अंग सों परिमल महकत, मैं पहचान्यौ मदन बढ़ावति।**

उस सुगंध को पाकर श्यामसुन्दर बेसुध हो गये। श्रीजी समझ गईं और छिपती-छिपती कुंजों से आती हैं ताकि श्यामसुन्दर देख न लें। ये खेल है प्रेम का कोई बैठा हो और प्रतीक्षा (इन्तजार) में हो तो जिसके इन्तजार में वह बैठा हो, चोरी से चुपके-चुपके उसकी आँखों को बंद कर ले और पूछा जाए ? जब कोई आँखों को बंद कर लेता है तो यह नियम है कि उसका नाम बताना पड़ता है, जब तक नाम सही नहीं बताया जाता तब तक आँख मूँदने वाला आँख को खोलता नहीं है, आँख को बंद रखता है, यह प्रेम की एक लीला है। श्यामसुन्दर यहाँ राधारानी की प्रतीक्षा में थे, जब उन्होंने नूपुरों की मधुर झनकार सुनी, दूर से उनका गान सुना और फिर उनके अंचल की, अंग की सुगन्धि मिली, तो वे उनके प्रेम में डूब गये। इतने में श्रीजी आती हैं और चोरी से छिपकर के श्यामसुंदर को पकड़ लेती हैं, वह चौंक जाते हैं - देखते हैं कि लाड़िलीजी आ गई हैं।

**इतनी कहत व्यास की स्वामिनि रहसि बिहँसि,**
**पिय उर लागि सुरति पुंज कुंजन बरसावति॥**

श्रीकृष्ण श्रीजी की अंचल-सुगंध को पाकर धन्य हो जाते हैं। यह लीला प्रमाणिक है जो महापुरुषों ने गाई है कि श्रीकृष्ण यहाँ उनके अंचल की हवा को पाकर धन्य हुए, उनके नूपुरों की ध्वनि को सुनकर के धन्य हुए, श्रीराधिकारानी के संगीत को सुनकर धन्य हुए। यह लीला ऐसी अद्‌भुत है कि इसके बारे में श्रीशुकदेवजी ने यहाँ तक कहा है कि श्रीकृष्ण कौन हैं? जितने भी अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड हैं, उन अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों में एक-एक जगह अनन्त जीव हैं और अनन्त-अनन्त जीवों की श्रीकृष्ण ही आत्मा हैं ऐसे वे श्रीकृष्ण समस्त चेतनों के भी चेतन हैं, समस्त देवों के भी देव हैं, ईश्वरों के ईश्वर हैं

**"नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्।"**

(कठोपनिषद् २/२/१३)

जो ईश्वर होता है, उसकी पहिचान है कि वह पूर्ण होता है। हमलोग ईश्वर नहीं हो सकते क्योंकि हमलोग अपूर्ण हैं। भगवान् विभु होता है, जीव तो उसके अंश हैं

**ईस्वर अंस जीव अबिनासी ।**

(रा. मा. उ. - ११७)

जब जीव अंश हैं तो भगवान् अनन्त हैं, उस प्रभु का लक्षण है कि वह पूर्ण है। 'पूर्ण' माने उसको कभी भी कोई इच्छा नहीं होती है। (इच्छा होना ही अपूर्णता का लक्षण है, कमी का लक्षण है।) इसलिये भगवान् का नाम है- आत्माराम। 'आत्माराम' माने जो अपनी आत्मा में ही रमण करता है, उसको बाहर रमण करने की जरूरत नहीं है। हम जैसे सांसारिक लोग लड्डूराम हैं, लड्डू में रमण करते हैं, कोई पेड़ाराम हैं, पेड़ा में रमण करते हैं, किसी को पेड़ा अच्छा लगता है, किसी को स्त्री अच्छी लगती है, किसी को धन अच्छा लगता है लेकिन भगवान् आत्माराम हैं, उन आत्माराम श्रीकृष्ण को कहीं भी कोई रमण करने की आवश्यकता नहीं है परन्तु शुकदेवजी कहते हैं कि एक बड़ी विलक्षण बात है

**रेमे तया चात्मरत आत्मारामोऽप्यखण्डितः।**
**कामिनां दर्शयन् दैन्यं स्त्रीणां चैव दुरात्मताम्**

(भागवत १०/३०/३५)

महारास में जब श्रीराधारानी मान करती हैं तो मान करते समय श्रीकृष्ण बहुत मनाते हैं।

**"कामिनां दर्शयन् दैन्यम्"** - 'दैन्यन्' माने श्रीकृष्ण दीन बन जाते हैं, श्रीराधिकारानी के आगे हाथ जोड़कर खड़े होते हैं, दीन बनके प्रार्थना करते हैं, उनकी कृपा माँगते हैं महारास के प्रारम्भ में भी माँगते हैं, बीच में भी माँगते हैं, अन्त में भी माँगते हैं, इसका अर्थ आचार्यों ने खोला (स्पष्ट किया) है, इसे हर प्राणी नहीं समझ सकता। महारास के प्रारम्भ में 'योगमायामुपाश्रितः' शब्द आया है

**भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः।**
**वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः॥**

(भागवत १०/२९/१)

ये महारास का पहला श्लोक है, इसमें कहते हैं **भगवानपि,** 'अपि' माने भी, वह भगवान् हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है, लेकिन कहीं कोई यह न समझ ले कि भगवान् होकर भी श्रीराधारानी का सहारा लेते हैं, ये कैसे भगवान् हैं ? तो इसीलिये 'अपि' लगा दिया कि भगवान् होने के बाद भी रस-ग्राह्य व रस-संचार के लिए रसप्रेम-पयोधि श्रीराधिकारानी का आश्रय लिया। 'ता रात्रीः' ये एक विचित्र बात है दिव्य समय में सभी दिव्य रात्रियाँ इकट्ठी होकर आयीं। जिस तरह मधुमक्खियाँ अनेक फूलों (गुलाब, कमल आदि अनेक पुष्पों) का रस लेकर के शहद बनाती हैं, उसी तरह से बहुत-सी रातों से सुंदर-सुंदर, मीठी-मीठी बातें 'विशेषताएँ' लेकर के एक महारास की रात्रि बनी। जैसे जाड़े के रात्रि की विशेषताएँ हैं कि जाड़े की रात्रि बहुत अच्छी होती है क्योंकि उसमें शयन का बहुत अच्छा आनन्द आता है अच्छी रजाई हो, अच्छा गद्दा हो, कोई पंखा की जरूरत नहीं। शीत ऋतु में रजाई के पद गाये जाते हैं श्रीजी-ठाकुरजी के लिए **'रंगमहल में पर गये पर्दा।'** उसके बाद मधुमास की रात्रि (बासंती ऋतु) आती है, उसकी भी अलग विशेषताएँ हैं, उसमें भी अलग मिठास है, उसमें न गर्मी रहती है, न जाड़ा रहता है, उसमें समान (अनुकूल) मौसम (जलवायु, वातावरण) रहता है, लोग होली खेलते हैं, रात-रात भर होली गाते हैं। पहले ब्रज में सारी रात यहाँ तक कि दिन भी निकल आता था होली खेलते-गाते-नाचते। गर्मी की रात्रि की भी विशेषताएँ हैं रात्रि में चले जाओ खुले मनोरम स्थल में, वहाँ कोई जरूरत नहीं है बहुत कपड़ा लादने की। अच्छी चाँदनी हो, यमुना का तट हो, अच्छी ठण्डी रेत 'बालू' में बैठे रहो, आराम करो, कोई बिस्तर की जरूरत नहीं है, कोई जाड़ा नहीं लगेगा, बड़ा आनन्द आएगा। फिर बरसात की रात आती है, वह भी बड़ी रसमय आनंददायक होती है पुरवैया चल रही है, हल्की-हल्की झीनी-झीनी फुहार गिर रही है और ऊपर अटारी पर सुंदर हवा आती है, फुहार पड़ती रहती हैं तो वह भी बड़ी सुखद होती है, उसमें भी कुछ विशेषता होती है। इसके बाद शरद की रात आती है चाँदनी चारों ओर छकाछक खिल रही है, दूर तक चाँदी की रेत जैसी बिछी हुई दिखाई देती है, चाँदी जैसा पानी दिखता है, हर रात में कोई न कोई विशेषता होती है।

❑❑❑

*क्रमशः....*

# लीलारस-वैचित्री कोष 'ब्रजभूमि'

श्री बाबा महाराज के प्रवचन धाम-महिमा (०१/०५/२००६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी सुगीताजी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

धाम विभु है, वह जब यहाँ प्रकट होता है तो तीन कारणों से उसकी महिमा अधिक बढ़ गयी, ये भागवतकार का मत है

**तत आरभ्य नन्दस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान्।**
**हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप।।**

(भागवत १०/५/१८)

वल्लभाचार्यजी ने सुबोधिनी में लिखा है कि **'हरेर्निवासात्मगुणै'** इन तीन गुणों के होने से साक्षात् वहाँ राधारानी ('रमा' माने रमया 'राधया') खेलने लग गईं।

१. श्रीहरि का नित्य निवास। २. साक्षात् भगवान् का शरीर 'विग्रह' ही ये धाम है।

स्वयं श्रीभगवान् के वचन हैं

**"पञ्चयोजनमेवास्ति वनं मे देहरूपकं"**

(बृहद् गौतमीय तन्त्र)

राधामाधव का शरीर ही ये धाम है।

**रोमालीमिहिरात्मजा सुललिते बन्धूकबन्धुप्रभा,**
**सर्वांगे स्फुटचम्पकच्छविरहो नाभीसरः शोभना।**
**वक्षोजस्तवका लसद्भुजलता शिञ्जापतच्छुंकृतिः**
**श्रीराधा हरते मनोमधुपतेरन्येव वृन्दाटवी।।**

(श्रीराधासुधानिधि -१७८)

ये राधारानी ही तो वृन्दाटवी हैं। मत्स्यपुराण में लिखा है कि ये श्रीराधा ही वृन्दावन हैं **"राधा वृन्दा वने वने।"** वैसे भी वृन्दावन ही राधा हैं क्योंकि राधारानी के १६ नामों में मुख्य नाम 'वृन्दा' भी है, तो इसीलिये मत्स्यपुराण में आता है कि 'वृन्दावने' यानि राधावने, वृन्दावन ही राधा हैं और राधा ही वृन्दावन है। ऐसा रसिकाचार्यों ने भी लिखा है

**गौरांगे म्रदिमा, स्मिते मधुरिमा, नेत्राञ्चले द्राघिमा,**
**वक्षोजे गरिमा, तथैव तनिमा मध्ये गतौ मन्दिमा।**
**श्रोण्यां च प्रथिमा, भ्रुवोः कुटिलिमा, बिम्बाधरे शोणिमा,**
**श्रीराधे ! हृदि ते रसेन जडिमा ध्यानेऽस्तु मे गोचरः।।**

(श्रीराधासुधानिधि - ७४)

रस-संचार की अनेक अवस्थायें होती हैं, एक अवस्था होती है शरीर जड़ की तरह हो गया। **"श्रीराधे ! हृदि ते रसेन जडिमा"** जब श्रीराधारानी के हृदय में रस ने जड़िमा भाव ला दिया तो वही उनका धाम-रूप हुआ। जो भागवतकार का मत है, वही सभी रसिकों का भी मत है, सब जगह 'भगवदीय वाणियों में' श्रीजी के धामस्वरूप को बताया गया है। जो गुण (प्रेम-दातृत्त्व, कल्मष-नाशनत्त्व, माया-निरसनता आदि) भगवान् में हैं, वही उनके धाम में भी हैं। धाम तुम्हारी माया की गाँठ को काट देगा, धाम युग के प्रभाव को रोक देगा। धाम तुमको भगवान् का प्रिय बना देगा, धाम की सेवा से तुम बिना प्रयास के प्रभु-प्राप्ति कर लोगे।

**गोस्वामी तुलसीदासजी की वाणी में -**

**बंदउँ अवध पुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि कलुष नसावनि॥**
**प्रनवउँ पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी॥**
**सिय निंदक अघ ओघ नसाए। लोक बिसोक बनाइ बसाए॥**

(रा. मा. बा. - १६)

ये पुरियाँ (अवधपुरी, मधुपुरी आदि) कलियुग को नष्ट करने वाली हैं। इन पुरियों (अवतरित धाम) में निष्ठा से रहने वाले को ठाकुरजी की ममता अपने-आप (सहज में) प्राप्त हो जाती है, मेहनत नहीं करनी पड़ती है। ये धाम भगवान् से भी श्रेष्ठ है कल्मष-नाश करने में जिस दोष (पाप) को श्रीजी-ठाकुरजी क्षमा नहीं कर सकते हैं, उसे धाम क्षमा कर देता है।

रामराज्य में जब धोबी ने जगज्जननी सीताजी की निन्दा किया कि रावण के यहाँ रहीं (कुछ ऐसी अभद्र बातें कहीं) तो उसको धाम ने क्षमा कर दिया और ऐसे बहुत से निन्दक लोग थे, उनको विशोक 'पाप रहित, दुःख-चिन्ता रहित' करके यहाँ (धाम में) बसाया, निकाला नहीं। धाम की ही उपासना से ब्रह्माजी का अक्षम्य अपराध (चोरी करने का अपराध) नष्ट हुआ, ब्रजधाम की परिक्रमा की थी ब्रह्माजी ने - **"त्रिः परिक्रम्य"** (भागवत १०/१४/४१) तभी से ब्रज-परिक्रमा प्रारम्भ हो गई। इसलिए जो पाप भगवान् भी क्षमा नहीं कर सकते हैं, वह धाम की कृपा से क्षमा हो जाता है। यहाँ अधिभूतधाम (धाम के भौतिकरूप) में जो विकृतियाँ (गड़बड़ियाँ) दिखाई पड़ती हैं, इन्हें मत सोचो, सभी में भगवद्-भाव रखो।

**"राम धामदा पुरी सुहावनि। लोक समस्त बिदित अति पावनि।।"**

(रा. मा. बा.- ३५)

ये पुरी नित्यधाम देने वाली है, केवल यही सोचो और इसी श्रद्धा से यहाँ रहो। भक्ति-भाव बढ़ाने वाली ये सब चीजें संत-महात्माओं ने लिखी हैं, लेकिन हम जैसे नासमझ लोगों के मन में प्रवेश नहीं करती हैं, आस्था नहीं बनती है। रटकर के भाषण तो दे देते हैं लेकिन विश्वास हो जाना एक अलग बात होती है। इसलिए यहाँ (अवतरितधाम में) ऐसी आस्था से रहो कि निष्ठा बढ़ती रहे। कुछ भी करते नहीं बनता है तो यहाँ आकर के मर ही जाओ तो भी तुम्हारा कल्याण हो जाएगा

**"चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजें तनु नहिं संसारा।।"**

(रा. मा. बा.- ३५)

ये वही पुरी है जो नित्य धाम से भी बड़ी है, इस भाव से यहाँ रहो। रसिक महापुरुषों ने लिखा है कि जो लीला-वैचित्री नित्यधाम में भी सम्भव नहीं है, वह यहाँ 'अवतरितधाम या अधिदैव लीलाभूमि में' आस्वाद के लिए भगवान् करते हैं। नित्यधाम से बढ़कर के यहाँ

रस माना गया है, जैसे वात्सल्य, बाल, पौगण्ड आदि की लीलायें नित्यधाम में नहीं होती हैं, लेकिन यहाँ 'अवतरित लीलाभूमि में' होती हैं। परकीया-लीला भगवान् नित्यधाम में नहीं कर सकते हैं, लेकिन यहाँ होती है। धामोपासना की दो शाखाएँ मानी गई हैं ब्रज और निकुंज। ब्रज व निकुंज वाले लोग अपनी-अपनी उपासना-पद्धति को श्रेष्ठ बताते हैं, अपने-अपने तर्क देते हैं लेकिन सभी श्रेष्ठ हैं, इसमें कोई हीनभाव तो रखना ही नहीं चाहिए। हमारे विचार से तो इस तर्कजाल में कभी नहीं पड़ना चाहिए। हमारे बाबा (पूज्यश्री प्रियाशरणजी महाराज) का भी यही मत था कि लोगों के ये सब अपने-अपने जो तर्क हैं, ये प्राकृतिक बुद्धि के हैं। भगवल्लीला कोई भी हीन नहीं है और उसमें जो हीनता-स्थापन (अभाव) करता है तो वह अपराध करता है। निकुंज वाले तो नित्यधाम की उपासना ले लेते हैं, वे कहते हैं कि हमारे यहाँ तो एक ही नित्य कैशोरभाव है बाल, पौगण्ड आदि भाव नहीं हैं। ब्रजलीला वाले कहते हैं कि तुम्हारे पास तो एक ही शैली है निकुंज भवन में लता के छेदों में से विहार देखते रहो बस और कोई शैली ही नहीं है तुम्हारे पास। हमारी ब्रजलीला में देखो- 'निरावरण मिलन हो रहा है, कहीं पनघट है, यमुना-किनारे चल रहे हैं, रस की वैचित्री है हमारी लीला में, अनेक छवियाँ हैं।' तो ये सब जितनी बातें हैं, सब सही हैं, आस्वादन होना चाहिए कोई लता-छिद्र में से भी देख रहा है, वह भी ठीक है। तुम अपना असीम मिलन, असीम लीलास्थल, असीम लीला-वैचित्री करते हो, यह भी ठीक है।

जैसे - ब्रज में दानलीला में ठाकुरजी से श्रीजी कहती हैं कि तुम हमसे इस तरह से छीना-झपटी करते हो, लोग आ रहे हैं-जा रहे हैं, तुम छेड़ते हो, लोग क्या कहेंगे ? ये नित्य धाम थोड़े ही है, ये तो यहाँ कलंक की बात करते हो न ? तो ठाकुरजी कहते हैं

**ब्रज वृन्दावन गिरि नदी, पशु पक्षी सब संग।**
**इनसों कहा दुराव प्यारी, ये सब मेरो अंग।।**
**नागरि दान दे .....नन्दराय लला घर जान दे.....।।**

'हे लाड़िली ! ये (नदी, पर्वत, पशु, पक्षी आदि) रस के बाधक नहीं हैं, इनसे क्या छिपाव करना ? ये सब तो हमारे ही अंग हैं ।' (ये महापुरुषों ने लिखा है।) तो 'ये सब रस की वैचित्री है' जैसे प्रथम परिचय होता है। नित्य धाम में ये लीलायें नहीं हो सकती हैं।

श्यामसुन्दर श्रीजी से पूछते हैं

**बूझत श्याम कौन तू गौरी।**
**कहाँ रहत काकी है जाई, देखी नाहिं कतहुँ इत कौरी।।**

"अरी गोरी ! कौन-की छोरी है तू, यहाँ तो मैंने कभी देखौ नाहिं?"

तो श्रीजी कहती हैं

**काहे कूँ हम इत में आवत, खेलत रहत आपनी पौरी।।**

"अजी ! हम यहाँ क्यों आवैं, हम तो अपने वृषभानु बाबा की पौरी में खेलती हैं और इधर हमारा क्या प्रयोजन आने का, और आप कौन है?

तो जरा संकोच में आ गये ठाकुरजी क्योंकि बदनाम हैं वो। 'चौरजारशिखामणि हैं' कौन नहीं जानता है ब्रज में। (अब जैसे मान लो कोई नामी चोर होय, उससे पूछें कि अजी ! आप कौन हैं? तो वह तुरन्त अपना नाम छिपाएगा।) ठाकुरजी चुप रहे, तो श्रीजी स्वयं बोलती हैं

**सुनत रहत श्रवनन नन्द ढोटा, करत फिरत माखन की चोरी।**

हम सुना करती हैं कि कोई नन्द के लाला हैं, वहीं आप हो? तब भी श्यामसुन्दर चुप रहे। तब तो श्रीजी ने उनका हुलिया और खोला 'अजी ! आप वही हो क्या ?' अब उनकी पहिचान (personality) में धक्का लगा, पहला-पहला परिचय और वह भी इतना लज्जाजनक। श्यामसुन्दर बोले - 'तिहारौ कहा चोरि हम लीन्हो' अजी ! हमने आपका क्या चुराया, ये दुनिया तो वैसे ही बात बनाती रहती है, हम जैसा ईमानदार कौन है, हमने तो आज तक चोरी नहीं किया है, आप बताइये हमने आपकी कोई चोरी किया है ?

पहला परिचय है, इसलिए श्रीजी बोलीं - 'नहीं हमारी तो कोई चोरी नहीं किया आपने।' श्यामसुन्दर बोले - तब तो फिर हम ईमानदार हैं, दुनिया तो सबको बदनाम करती है। 'खेलें चलो संग हिलमिल' चलिए हमलोग परस्पर मिलकर अब खेलें।

**सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि, बातन्ह लीन्ही राधिका भोरी।।**

वो राधारानी तो भोरी थीं, उनको श्यामसुन्दर ने खेलने के लिए विश्वास दिला दिया कि हम तो बिल्कुल चोर नहीं हैं।

ये सब लीलायें नित्य धाम में संभव नहीं हैं। बहुत से रसिकजन इस बात को मानते हैं। राधावल्लभ सम्प्रदाय में 'स्वधर्म बोधिनी' ग्रन्थ है, उसमें ग्रंथकार लिखते हैं कि धराधाम पर राधामाधव क्यों आये ? उत्तर देते हैं कि **"जग देखन इच्छा चलि आई।"** अवतार का हेतु लाड़िलीलाल की मौज है, यहाँ घूमने चले आये। यानि 'रसास्वाद की वैचित्री' के लिए आये। रसास्वाद की वैचित्री के लिए ही रसिकों ने अनेक पद बनाये हैं और यहाँ तक लिख दिया है

**जहाँ नहीं यह भुवि वृन्दावन, बाबा नंद यशोदा माय।**

जहाँ यह भौम वृन्दावन नहीं है और यह लीला वैचित्री नहीं है (कभी वात्सल्य, कभी श्रृंगार, कभी सख्य), ऐसे नित्य धाम में हम जाकर क्या करेंगे? भले ही वह नित्य धाम है, चाहे वैकुण्ठ है, कुछ भी है।

**गोविन्द प्रभु तजि नंद सुवन कौ, ब्रज तजि वहाँ मेरी बसै बलाय।।**

तो ये सब लीलाएँ अपने-अपने आस्वाद की दृष्टि से ब्रजोपासकजन कहते हैं। अनेक लीलाओं की वैचित्रियों का जो कोष है वह है ब्रजलीला। इसी तरह से नित्य धाम की उपासना करने वाले वहाँ की नित्यता आदि को लेकर के अपनी श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हैं। यह जो अधिभूत धाम है, इसी में अधिदैव है और अधिदैव में ही नित्य धाम है। धाम की इस त्रिरूपता का वर्णन शास्त्रों में किया गया है। 'अधिभूत में ही अधिदैव और अधिदैव में ही नित्यता' ये तीनों एक हैं।

❑❑❑

*क्रमशः....*

# सम्पूर्ण सृष्टि का मूलहेतु 'भगवन्नाम'

श्री बाबा महाराज के सत्संग "नाम महिमा" (१७/०५/२०१०) से संकलित
संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी श्यामश्रीजी, दीदी माँ गुरुकुल (मान मंदिर) की छात्रा

## गोस्वामी तुलसीदासजी की वाणी में -

**बंदउँ नाम राम रघुबर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को॥**

(श्री रा च मा, बाल - १९)

'भगवान् का नाम' ही चराचर सृष्टि का प्रमुख कारण 'मूलाधार' है। 'कृसानु - आग, भानु - सूर्य, हिमकर - चन्द्रमा' इनमें जो तेज है, वह भगवन्नाम का है। सूर्य में जो चमक है, वह भगवान् के नाम की है। आग में जो भी ऊर्जा है, वह भगवन्नाम की ही है। चन्द्रमा में भी जो कुछ अमृत है, शीतलता है, वह भी भगवन्नाम की है।

## श्रीमद्भगवद्गीता में

**यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्।**
**यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ।।**

(श्रीमद्भगवद्गीता - १५/१२)

श्रीभगवान् ने कहा "हे पार्थ ! सूर्य में जो तेज है, वह मेरा है यानि मेरे नाम का है। चन्द्रमा में जो शीतलता है, अग्नि में जो तेज है, वह सब मेरा (भगवन्नाम् का) ही है।" नाम और नामी एक ही हैं।

श्रीतुलसीदासजी महाराज ने कहा है

**"समुझत सरिस नाम अरु नामी।"**

(रा. मा. बा. २१)

"समझने में (देखने में, बोलने में) नाम और नामी दोनों समान (एक जैसे) हैं।" इसलिए सूर्य में जो तेज है, वह भगवन्नाम का है, यानि तेज कहाँ से आया? तेज तो एक ही है भगवान् का।

इसके आगे भगवान् कहते हैं

**गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा।**
**पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः॥**

(गीता १५/१३)

पृथ्वी में जो धारण-शक्ति है, वह मेरी है। चंद्रमा रूप हो करके मैं अमृत बरसाता हूँ और सभी औषधियों को पुष्ट करता हूँ अर्थात् रस भगवान् बरसाते हैं। (संसार में रस चन्द्रमा देता है यानि भगवान् चन्द्रमा बनकर के रस देते हैं - गेंहूँ, जौ, चना आदि में रस आता है, फिर सूर्य उसको पका देता है यानि भगवान् ही सूर्य बनकर के पकाते हैं।) तो मैं ही सूर्य हूँ, मैं ही चन्द्रमा हूँ यानि भगवन्नाम ही सब कुछ है।

## उपनिषद् में

वही बात भगवान् वेद, उपनिषद्, भागवत, गीता, रामायण आदि में कहते हैं, एक ही भाव है (समन्वय करके चलना चाहिए, इससे एक शक्ति मिलती है अन्तः कारण में)। सब कुछ ईश्वर है, उसी की सत्ता सभी बताते हैं। उपनिषद् में कहा गया है

**न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।**
**तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥**

(श्वेताश्वतर-उपनिषद् ६/१४)

वहाँ सूर्य कहाँ पहुँचेगा (क्या चमक पैदा करेगा) ? वहाँ चन्द्रमा, तारे कहाँ हैं ? विजलियाँ आदि वहाँ क्या चमकेंगीं भगवान् के सामने ? अग्नि आदि वहाँ कैसे जल सकती है ? उसी (भगवान्) के तेज से (प्रकाश से) सब कुछ भासित (प्रकाशित) हो रहा है। (ये उपनिषद् का मंत्र है, निर्भयतापूर्वक ओजस्वी-वाणी में बोलना चाहिए। जब हम (श्रीबाबा महाराज) इलाहबाद में पढ़ते थे, तो वहाँ एक बहुत ही अच्छे अध्यापक चट्टोपाध्यायजी थे, जो वेद, उपनिषद्, श्रुतियाँ आदि को बड़े ही ओजस्वी ऊँचे स्वरों में पढ़ाते थे कि सुनने वाले विद्यार्थियों में करेंट 'विशेष जोश, उत्कण्ठा, उत्साह' उत्पन्न हो जाता था।)

## सर्वदेवमय

**समस्त देवताओं में जो कुछ है, वह भगवन्नाम की महिमा है ।**
**बिधि हरि हरमय बेद प्रान सो । अगुन अनूपम गुन निधान सो ॥**

(रा.मा.बा.- १९)

ब्रह्मा, विष्णु, शिव इन सब में भगवन्नाम का प्रभाव है, नाम ही ब्रह्मा है, नाम ही विष्णु है, नाम ही शिव है। वेद का प्राण 'ओंकार' भी नाम ही है। (ये नहीं कि कोई कहे 'राम नाम' वेद में नहीं है, वेद का प्राण भगवन्नाम है।) 'अगुन' - माया के गुणों से परे है, भगवन्नाम को चिन्मय मानना चाहिए। 'अनुपम' भगवन्नाम की कोई टक्कर नहीं है, इसकी अन्य साधनों, अन्य धर्मो से टक्कर नहीं लेनी चाहिए क्योंकि ये सबसे अनुपम है, अन्य किसी से तुलना, बराबरी हो ही नहीं सकती। जिसके अन्दर भगवन्नाम आ गया, उसमें अनन्त गुण आ जाते हैं। सब देवता भगवन्नाममय हैं और देवताओं में जो शक्ति है, वह भगवन्नाम की है। भगवन्नाम से ही महादेवजी, जो काशी में मरता है, उसको मुक्त करते हैं। ये महामंत्र है 'भगवन्नाम'।

**महामंत्र जोइ जपत महेसू । कासीं मुकुति हेतु उपदेसू ॥**

(रामचरितमानस, बालकाण्ड.-१९)

स्वयं भगवान् शिव ने कहा है

**"अहं भगवन्नाम गुणैः कृतार्थो वसामि काश्यामनिशं भवान्या।"**

(अध्यात्मरामायण, युद्धकाण्ड १५/६२)

"हे देवी ! मैं ही भगवन्नाम से मुक्ति देता हूँ।"

महादेवजी में महादेवत्व क्यों आया ? भगवन्नाम से आया। ब्रह्माजी में ब्रह्मत्व कहाँ से आया ? भगवन्नाम से आया। सभी देवताओं में सबसे पहले गणेशजी की पूजा होती है, क्यों ? भगवन्नाम के कारण।

**महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ॥**

(रा.मा.बा.-१९)

गणेशजी भगवन्नाम की महिमा जानते हैं, इसीलिये सबसे पहले पूजे जाते हैं।

## एकमात्र सर्वशक्तिमान की ही सत्ता

संसार में किसी की सत्ता नहीं है, न कहीं बल है, न रूप है। हम लोग सेठों की सत्ता मानते हैं, मिनिस्टर, जज, अधिकारियों आदि का प्रभाव समझते हैं, इसी से गिर जाते हैं (भगवान् से दूर हो जाते हैं)। किसी संसारी जीव के रूप पर जो (स्त्री या पुरुष) आकर्षित हो गया, वह कुत्ता, कुतिया की तरह है .... विनाशी रूप की सत्ता मान लिया, नाशवान् शरीर की 'चमड़े की' सत्ता मान लिया, वह मनुष्य कहाँ रहा ? इस संसार में भगवान् के अलावा किसी की सत्ता नहीं है। भक्त वही है जो न किसी की शक्ति की सत्ता मानता है, न रूप की सत्ता मानता है, न बल की सत्ता मानता है, न धन की सत्ता मानता है। इसका प्रमाण देखो, प्रह्लादजी ने कहा था अपने पिता से "आपकी क्या सत्ता है ? आप क्या जीत सकते हैं?

**न केवलं मे भवतश्च राजन् स वै बलं बलिनां चापरेषाम्।**
**परेवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः॥**

(भागवत ७/८/८)

हे राजन ! आपमें, मुझमें और जितने भी बलशाली लोग हैं, उन सबमें केवल सर्वशक्तिमान भगवान् का ही बल है। भगवान् की उस अद्वितीय अनन्त शक्ति के आधीन ब्रह्मा आदि से लेकर परावर (छोटी-बड़ी) चराचर-सृष्टि है।" प्रह्लादजी की तरह एकमात्र भगवान् की ही सत्ता (बल, शक्ति) समझो, ऐसा अचल अनुराग हो श्रीभगवान् में।

सत्ता एकमात्र भगवान् के रूप की, भगवान् की शक्ति की, भगवान् के बल की है। सब भक्तों का एक ही मत है, केवल शब्द अलग-अलग हैं। हनुमानजी ने सबसे पहले सीताजी से यही कहा है कि मैं तो बंदर हूँ, मुझमें क्या ताकत है ?

**सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।**
**प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल॥**

(रा.मा. सु.- १६)

ये भक्त सोचता है। अपने में ताकत तुम समझ लोगे (हम भक्त हैं, हम बड़े विरक्त हैं) तो भगवान् की भक्ति खत्म हो गई। अपने को बुद्धिमान, अपने को बलवान समझने वाला भक्त नहीं है, वह तो कुत्ते, बिल्ली की तरह है। 'अहम्' आया और भक्ति खत्म.....!

**"प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु व्याल॥"**

चाहे तुम्हारे सामने काल आ जाए लेकिन उसकी सत्ता न मानो।

हनुमानजी ने रावण से कहा है

**जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।**
**तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥**

(रा. मा. सु. - २१)

"अरे दसमूढ़ रावण ! तेरे में ताकत कहाँ से आ गई, अपनी तारीफ करता है तू । 'जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।' उस (सर्वसामर्थ्यवान् भगवान्) के बल से ही तूने सारा संसार जीता है।"

जो अपनी ही शक्ति को समझता है कि हमारी ही ताकत है, हम ही सब कुछ हैं, तो वह मूर्ख (मूढ़) है।

जब भगवान् श्रीराम ने बड़ी तारीफ किया हनुमानजी की कि हनुमान ! तुमने कैसे लंका जलाई, ये काम कैसे किया ? (ये सुनकर के प्रसन्न (खुश) हो जाना चाहिए था कि हाँ प्रभु ! हमने तो ऐसा काम किया।) लेकिन हनुमानजी बोले

**सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई॥**
**ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकुल ।**
**तब प्रभावँ बड़वानलहिं जारि सकइ खलु तूल ॥**

(रा. मा. सु. - ३३)

"अरे, हमने क्या किया ? ये तो हे प्रभु ! केवल आपके ही कृपा-प्रताप से हुआ है, इसमें मेरी कोई प्रभुता नहीं है।" अपने अन्दर ये प्रतीति नहीं होनी चाहिए कि हमारे शरीर में ताकत है, हममें कुछ बल है, हमारे पास धन है, ये सब मूर्खों का काम है, जरा-सी भी तुमको प्रतीति हो जायेगी कि मैं कुछ हूँ, मेरी बात मानी जायय बस, भक्ति खत्म हो गई। जीव हठ क्यों करता है ? मैं ...मैं...तू .. .तू ...क्यों करता है, लड़ाई क्यों होती है, काम, क्रोध आदि क्यों पैदा होता है ? मैं (अहं भाव) से उत्पन्न होता है।

### श्रीसूरदासजी की वाणी में-

**करी गोपाल की सब होइ।**
**जो अपनौं पुरषारथ मानै, मिथ्या बकबादी है सोइ॥**
**साधन, मंत्र, जंत्र उद्यम, बल, ये सब डारौ धोइ।**

(सूर-विनयपत्रिका - २७६)

जो कोई भी संसार का आदमी अगर अपने को कुछ भी समझता है, तो समझो वह पूरा पाखंडी, झूठा, बक्की है, चाहे बाबाजी है, साधु है, गुसाई है, आचार्य है, वह निश्चित भगवद्विमुख हो गया है। "हम बड़ा साधन करते हैं, बड़ा तप करते हैं ....।" ऐसा कहने वाला पाखण्डी है। **'साधन, मंत्र, जंत्र उद्यम, बल, ये सब डारौ धोइ।'** साधन आदि के करने में उत्पन्न हुए अहं-भाव को धो डालो, साधनों का अहम् मत करो।

**रसिकाचार्य स्वामी हरिदासजी की वाणी में-**

**तिनका ज्यौं बयार के बस ।**
**ज्यौं चाहै त्यौं उड़ाय लै डारै, अपने रस ॥**
**ब्रह्मलोक, सिवलोक और लोक अस ।**
**कहिं श्रीहरिदास बिचारि देखौ, बिना बिहारी नाहिं जस ॥**

जैसे अपने भार रूपी सत्ता से विहीन 'तिनका' अत्यन्त हल्का होने से हवा के साथ उड़ता रहता है, वैसे ही अहंकार रहित (स्वसत्ता-शून्य) जीव के साथ सदा 'भगवान्' हृदय में रहते हैं, लेकिन जब जीव में कर्तृत्त्व का अभिमान आ जाता है तो भगवान् से विमुख हो जाता है। अरे, जीव में क्या ताकत है ? अपनी अहंता के कारण से अपना बल मानता है। सभी रसिक महापुरुषों ने यही कहा है कि अपने अन्दर जरा भी अहं की प्रतीति हुई कि हम कुछ हैं, बस उसी समय भक्ति नष्ट हो जाती है।

*क्रमशः....*

❑❑❑

# नहीं ऐसो जनम बारम्बार -मीरा जी

(श्री बाबा महाराज के सायंकालीन पदगान से संग्रहीत)

संकलनकर्त्री/लेखिका - साध्वी अचलप्रेमा जी

**"नहीं ऐसो जनम बारम्बार"**

भागवत के एकादश स्कंध में भगवान् ने यही कहा था - उद्धव!

**लब्ध्वा सुदुर्लभमिदं बहुसम्भवान्ते**
**मानुष्यमर्थदमनित्यमपीह धीरः।**
**तूर्णं यतेत न पतेदनुमृत्यु याव-**
**न्निःश्रेयसाय विषयः खलु सर्वतः स्यात्॥**

(भा.११/०९/२९)

यह मनुष्य शरीर विषयों के लिए नहीं मिला है, कल्याण के लिए मिला है। विषय-भोग तो चौरासी लाख योनियों में कुत्ते, बिल्ली, गधे सभी भोगते हैं। ऐसे शरीर को पाकर के जो दुर्लभ नहीं, सुदुर्लभ- बहुत दुर्लभ है, देवताओं को भी नहीं मिलता, अरबों जन्मों के बाद मिलता है लेकिन ये थोड़ी देर के लिये मिला है बस। अतः दिन-रात प्रयत्न करो, जब तक मृत्यु नहीं आती है, उसके बाद कुछ नहीं कर पाओगे। इसलिए शरीर को विषयों से बचा करके कल्याण की ओर ले जाओ, यही मीरा कह रही हैं।

**"नहीं ऐसो जनम बारम्बार"**

जैसे भगवान् का अवतार होता है वैसे ही जीव के लिए उसको अवतार जैसा यह मनुष्य शरीर मिला है।

**"न जानूँ कहा पुण्य प्रगटे"**

हम लोग सोचते नहीं यह शरीर जा रहा है। इसके जाने के बाद क्या होगा, कोई नहीं सोचता कि **"मानुषा अवतार"** यह मनुष्य अवतार हुआ है। जागो! हर समय भगवान की ओर चलो।

लोग सोचते हैं, बच्चा बड़ा हो रहा है, बड़ा नहीं काल की ओर जा रहा है, आयु घट रही है परन्तु जीव सोचता नहीं कि इस मानव शरीर के बाद क्या होगा ?

**"बढ़त छिन-छिन घटत पल-पल"**

एक-एक क्षण घट रहा है उम्र का, हम मौत के किनारे जा रहे हैं। इसलिए सब संसार छोड़ो। मीरा कहती हैं - सोचो, जब शरीर छूटेगा, तीन लोक का राज्य घूस में देकर भी तुम एक पल की आयु नहीं बढ़ा पाओगे, एक फूंक (अंतिम समय की प्राणवायु) चली जायेगी, बस देर नहीं लगेगी।

**"जात न लागै बार"**

वल्लभ कुल में एक वार्ता आती है कि सिद्ध पुरुष लोग कैसे ज्ञान कराते हैं? एक सिद्ध गुरुजी ने अपने शिष्य को एक पटुका दिया। वह पटुका पहनकर जब बाजार में चला तो हर आदमी का पिछला जन्म उन्हें दिखाई देने लगा। कोई ऊंट था, कोई गधा था, कोई सर्प था, कोई उल्लू था, कोई तोता था, कोई मैना, कोई गिलहरी। घबराकर उन्होंने उस पटका को उतार दिया और बोले- 'ये क्या देख रहा हूँ मैं?' अपने घर में जब गए और उसको पहनकर देखा अपनी स्त्री को तो वह कुतिया दिखाई पड़ी। घबराकर पटका उतार दिया और बोले- 'यह क्या है?' यानि उनकी स्त्री पूर्व जन्म में कुतिया थी, फिर उनकी स्त्री ने पटका को छीन कर पहना तो उनका पति भालू दिखाई पड़ा। उनको ज्ञान हो गया कि जितने भी हमलोग मनुष्य हैं, जाने किस-किस योनि से गधे, कुत्ते, बिल्ली बनकर आये हैं लेकिन मनुष्य शरीर को पाकर उन्ही भोगों में लग गए इसलिए मीरा जी कहती है- "जागो"। हे दीनबंधु, कृपा करो, संसार के अन्धकार से, विषयों से बचाकर अपनी ओर लगा दो। आयु घट रही है, नष्ट हो रही है।

**"बढ़त छिन-छिन घटत पल-पल"**

एक फूंक जाएगी, बस उसी में **"जात ना लागे बार"** जैसे पेड़ से कोई पत्ता टूटकर गिरता है फिर कभी पेड़ में नहीं लग पाता, उसी तरह से जिस परिवार से जो चला गया, माता-पिता, स्त्री-पति, उससे फिर कभी भेट नहीं होती। अपना कुछ नहीं है ,केवल प्रभु है लेकिन मनुष्य इस माया में भूल जाता है।

**"वृक्ष के ज्यों पात टूटे, फिर न लागे डार"**

कोई पत्ता पेड़ से टूटकर क्या कभी जुड़ा है, कभी नहीं जुड़ सकता, उसी तरह से कोई व्यक्ति परिवार से अलग होकर के मरने के बाद कभी नहीं मिला है, कभी नहीं मिलेगा, कभी नहीं मिल सकता। अपना कोई नहीं है, अपना जो है उसे हम भूल गए हैं। वो है श्याम। **वृक्ष के ज्यों पात टूटे, फिर न लागे डार** डाल से टूटकर पत्ता फिर कभी नहीं जुड़ेगा, उसी तरह से उस परिवार को जिसने अपना समझा, पुनः उसमे कभी नहीं आएगा। हे दीनबन्धु! तूने यह शरीर तो दिया, इस शरीर को अपनी ओर लगा लो। यह भवसागर है, यह आकाश में भी है, पाताल में भी है। देवता भी डूब रहे हैं, दानव भी डूब रहे हैं। हम सब डूब रहे हैं, बचो! इस शरीर के जाने के बाद फिर तुम कभी नहीं बच पाओगे।

**"भवसागर अति जोर कहिये"**

यह भवसागर अनंत है, ये ऊपर के जितने लोक दिखाई पड़ रहे हैं, सब भवसमुद्र में डूब रहे हैं। इसकी ऊंचाई अनंत है।

**"अनंत ऊँची धार"** गोस्वामी जी ने कहा है - यह संसार अनंत है, जैसे गूलर का पेड़ किसी ने देखा होगा, उसमे लाखों फल होते हैं। उस एक फल को तोड़ो तो उसमे हजारों कीड़े होते हैं, उसी में उड़ते हैं, खेलते-कूदते हैं। उसी तरह यह ब्रह्मांड है। हम लोग इसमें बंद हैं। जैसे गूलर में कीड़े बंद रहते हैं, उसी में पैदा होते हैं,

उसी में बड़े होते हैं, उसी में जवान होते हैं, बूढ़े होते हैं, उसी में मर जाते हैं। उस गूलर के बाहर उनको यह पता नहीं कि कितनी बड़ी दुनिया है, उसी तरह ब्रह्मांड में हम लोग बंद हैं। कीड़े की तरह हँसते, खेलते, भोग-भोगते हैं लेकिन इससे छूटने की कोशिश नहीं करते हैं क्योंकि अज्ञान से बंधन पसंद है। यह भवसागर अनंत है, इससे बचो भाई। यह भवसागर अनंत है, तुम तो एक छोटे से परिवार में फँसे मर रहे हो, मेरा घर-मेरा घर। ये सब छोड़ो। ये सब छोड़कर भगवान् के नाम से प्यार करो। चलो निकलो। जीवन भगवान् के नाम के लिए दे दो, नहीं तो फिर कभी तुम नहीं छूट पाओगे।

**"राम नाम का बाँध बेड़ा"**

लट्ठे की नाव बनाओ, उसको बेड़ा कहते हैं। भगवान् के नाम में जीवन लगा दो, हटा दो मोह-माया और विषयों से।

**"उतर परली पार"**

यह जीवन जा रहा है, इसमें पार लग गए तो लग गए नहीं तो फिर सदा डूबते रहोगे। जागो, जागो - मीरा कह रहीं है। जैसे कोई जुआड़ी जुआ खेलता है, जीत जाता है, वैसे ही यह मनुष्य शरीर भी एक जुआ है। इसमें हर आदमी हार कर जाता है, जन्म को भोगों में गँवा कर जाता है। संसार की मोह-ममता में ऐसे ही मर जाता है फिर दुबारा शरीर मिलता नहीं है। हार कर जाता है। मीरा जी कहती हैं- तुम जीतना सीखो।

**"ज्ञान चौसर मण्डी चौहटे"**

ज्ञान का तो पासा है, उसे चौसर कहते हैं। जिस पर गोट खेली जाती है, उसके चार कोने होते हैं। उसमे ज्ञान के चौसर को फैलाकर चौहट्टे की मण्डी पर बैठ करके चार मार्ग हैं - ज्ञान , भक्ति , कर्म और योग

**"सुहृद पासा सार"**

प्रेम का पासा फैला दो , केवल भगवान् में प्रेम मिल जाए, बस यही रास्ता है जीतने का, नहीं तो इस दुनिया में हर आदमी हार कर गया। सुहृद माने प्रेम, श्याम सुंदर से प्रेम का पासा लगाओ और देखो, तुम जीत जाओगे नहीं तो मरके हार कर चले जाओगे अँधेरे में।

**"या दुनिया में रची बाजी"**

मीरा जी कहतीं हैं- मैं देखती हूँ कि हर आदमी हार कर जा रहा है। हर आदमी जो मरता है, वह बाजी हार कर जाता है। अँधेरे में जाता है, चौरासी लाख योनियों में जाता है। कोई भी जीत के नहीं जा रहा है। यही कबीर जी ने भी कहा-

**कहत कबीर सुनो भइ साधो पार उतर गए संत जाना रे**

केवल भगवान् के भक्त-संत पार हो गए, बाकी हर आदमी हार कर गया, डूबके गया सदा के लिए चला गया।

**या दुनिया में रची बाजी** बोलो तुम क्या चाहते हो, जीतना चाहते हो कि हारना चाहते हो - मीरा कह रही हैं -**"जीत भावै हार"** बोलो क्या चाहते हो? हे मनुष्यों, उठो-उठो। बाजी को जीत कर जाओ, हार कर मत मरो, प्रभु से मिलो। हे गोविन्द! तू मुझे हारने मत दे, दया करदे अपनी।

मीरा जी कहती हैं- सब वेद-पुराण, साधु-संत-महंत यही पुकार-पुकार के कह रहे हैं कि ये शरीर फिर नहीं मिलेगा, उठो, भगवान् की प्राप्ति करो लेकिन हर मनुष्य हार कर जाता है, हार कर मरता है। माया पटक देती है। चिल्ला रहे हैं महात्मा लोग

**"साधु संत महंत ग्यानी, कहत पुकार-पुकार"**

वे पुकार कर कहते हैं। वेदों ने यही कहा था- **'उत्तिष्ठ, जाग्रत'** उठो जागो, **'प्राप्य वरान्निबोधत'** चलो, श्रेष्ठ महापुरुषों के पास, वहाँ बोध, ज्ञान-भक्ति प्राप्त करो, उठो चलो।

**"क्षुरस्य धारा निहिता दुरत्यया"**

छुरे की धार पर चलना है।

**'दुर्ग पथस्तत्कवयो वदन्ति'** बड़ा कठिन रास्ता है, भोग तुमको पटक देंगे अत: उठो, चलो, जागो।

**जागो अब जिन जागना, यह जागन की बाट ।**
**फेर कि होय जागना, जब लम्बे पाँव पसार॥**

जागो, फिर कब जागोगे, जब लम्बे पाँव पसार कर मर जाओगे तब क्या जागोगे? साधु-संत पुकार कर कहते हैं- जागो, लेकिन हम बहरे हो गए हैं। यह शरीर गया, फिर नहीं मिलेगा,उठो भाई।

**"दासी मीरा लाल गिरधर"**

मीरा कहती हैं- केवल गिरधर ही सत्य है, वही मेरा पति है, माता-पिता सब कुछ है। लोग मीरा को समझाते थे, तू राजवंश की रानी है। कलंक लगता है। मीरा कहती थी - मैं राजवंश अथवा किसी वंश का नहीं हूँ। लोगों ने पूछा क्यों, तू तो राठौरों की, सबसे वीर राजपूतों की लड़की है, मीरा बोली- नहीं, मेरा सबकुछ गिरधर है, वही मेरा पति है, वही मेरा धन है। वही मेरा माँ है, वही मेरा पिता है , वही मेरा भाई है। तुम्हारा राजवंश परिवार है तो जाओ अपने परिवार में मान बढाओ, तुम जाओ। राणाजी मेरा तो एक यही सम्बन्ध है गिरधर से। मैं उसी की दासी हूँ। मेरा और कोई रिश्ता नहीं रहा और कोई सम्बन्ध नहीं रहा। दो दिन का जीवन है, क्यों संसार में मरते हो, क्यों मोह में अंधे होते हो, क्यों भोगो में प्रभु को भूलते हो। केवल दो चार दिन ही तो जीना है।

**'जींवणा दिन चार'** बस चार दिन जियागे, उसके लिए क्यों महल बनाते हो? महल-दुमहले, पैसा-भोग आदि चले जायेंगे, यह याद रखो, इसलिए उठो।

**"दासी मीरा लाल गिरधर जीवणा दिन-चार"**

अरे, जैसे भगवान् का अवतार होता है वैसे ही तुम्हारा भी अवतार हुआ, भगवान् ने मनुष्य बना दिया, नहीं तो करोड़ों वर्ष तक मक्खी-मच्छर, कुत्ते, बन्दर बनके आये हैं हम लोग, इसलिए उठो।

**न जाने कहा पुण्य प्रगटे मानुषा अवतार** भगवान् के अवतार की तरह इस शरीर की कीमत करो, क्यों नष्ट करते हो ?

❑❑❑

# Sudarshana Dwipa

The heart of Maha&Bharat is Srimad Bhagvad Gita, which is illustrated in Bhishma Parva (6th Parva) from Chapter 25&42- These 18 chapters comprising of 700 shalokas are world famous and they contain essence of the philosophy described in Srimad Bhagavatam- In the same Bhishma Parva] let us go to Chapter&5 and read from Shloka 13&17-

सुदर्शनं प्रवक्ष्यामि द्वीपं तु कुरुनन्दन ।
परिमण्डलो महाराज द्वीपोऽसौ चक्रसंस्थितः ॥ १३ ॥
नदी जलप्रतिच्छन्नः पर्वतै श्चाभ्रसंनिभैः ।
पुरैश्च विविधाकारै रम्यैर्जनपदैस्तथा ॥ १४ ॥
वृक्षैः पुष्पफलोपेतैः संपन्नधनधान्यवान ।
लवणेन समुद्रेण समन्तात परिवारितः ॥ १५ ॥
यथा च पुरुषः पश्येदादर्शे मुखमात्मनः ।
एवं सुदर्शनद्वीपो दृश्यते चन्द्रमण्डले ॥ १६ ॥
द्विरंशे पिप्पलस्तत्र द्विरंशे च शशो महान् ।
सर्वौषधिसमावायः सर्वतः परिवारितः ॥ १७ ॥
आपस्ततोऽन्या विज्ञेयाः शेषः संक्षेप उच्यते ।
ततोऽन्य उच्यते चायमेनं संक्षेपतः शृणु ॥ १७ ॥

Sanjay explains to King Dhritrastra about our Earth planet.

Sanjay says that Kuru-Nandan – this Bharat-Khand is called Sudarshana-dwipa and it looks beautiful to the eyes. Being circular, it looks like the disc of the Lord and it is attached to the cycle of time (chakra) in the form of a disc presided over by Bhagavan Sudarshana (5.13).

This Sudharshan dwip has different types of rivers full of water, high mountains touching the clouds, many different type of cities, many delightful provinces, and full of trees of flowers and fruits. This dwip has many different types of opulence. This salt-water ocean is everywhere on this dwip (5.14-15).

[The next sholoka 16th has been translated differently or its meaning is purported in two different fashion.]

(1) As one sees their own face in the mirror, one can see Sudharshan dwip in Chandra-Mandal (Moon) (5.16).

(2) As one sees their own face in the mirror, Sudharshan dwip is seen from the Chandra Mandal (Moon) as (5.16) :

This earth of Bharat-Khand has two parts. One part looks like two leaves of Peepal tree and the other part looks like a large hare (Rabbit) with one small Peepal tree leave. It is surrounded with an assembly of many different types of medicinal and deciduous plants.

Besides these portions, rests are all water and I explained this in very short (5.17).

The first line of Shloka 17 is the most mysterious and it perplexed the Thiruvenkata Swami (19th Century) of Shri Ramunuja Sampradaya as what peepal leave and hare (large Rabbit) has to do with the geography of the earth as said in this line. He started to do the meditation and prayed to Lord Krishna to reveal its meaning. Finally, by the divine inspiration, he sketched the drawing of the two peepal leaves in one side and a hare with small peepal leave on the other half.

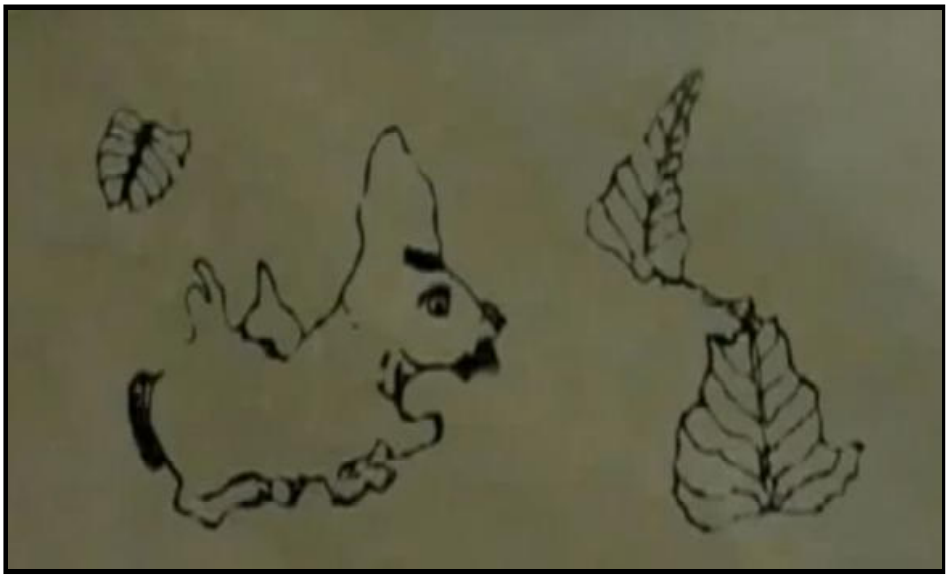

He was still mystified by the meanings of the peepal leaves and a hare and their connection with the Earth planet as seen from the moon.

But, when he turned the paper upside down, he immediately saw the connection. The hare (rabbit) perfectly corresponded with Europe, Asia and Africa. While the peepal leaves corresponded with North America and South America. The smaller leave corresponded to Australia.

These continents comprise our earth which Maha-Bharata calls it as Bharat Khand.

The famous "Blue Marble" shot of Earth was taken on Dec 7, 1972 by the crew of Apollo 17 on their way to moon. With the Sun at their back, they had a perfectly lit view of the blue planet. But, when NASA published the shot, they had to tilt the photograph upside down to align it with the present-day map to which we are familiar.

This mysterious first line of the Shloka 5.17 is very cryptic and it could only be deciphered when Thiruvenkata Swami prayed to Lord Krishna to reveal its meaning.

Vishnu Puran also says that our earth is Bharat-Khand with a diameter of 8000 miles which is close to actual 7,917.5 miles as per scientific calculations.

Baba Maharaj says that each and every shloka of Gita (that to of Maha-Bharata) is divine and if someone can understand and inculcate the meaning of even one shloka of Gita in their life, they can get over this immense ocean of the material misery.

Reference:

"Vedic Cosmos – Full documentary" published on https://youtu.be/2NFKFBEaCtM

❑❑❑

# ...द्वार मैं आयो तेरे मांगूं कृपा की विनती राधा रानी...

द्वार मैं आयो तेरे मांगूं कृपा की विनती राधा रानी ।
कहाँ जाऊं का सौं कहूँ कौन सुने विनती राधा रानी ॥

भंवरा सों हरि उडतो डोले बरसाने की डगरिया राधा रानी ।
गौर चरण में मेरी कोटि कोटि प्रणति राधा रानी ॥

# गुरुकुल बाल वर्ग

## मीराजी के मधुर स्वभाव से पाखंडी साधु का सुधार

– आठ वर्षीय विरागा

**विषई कुटिल एक भेष धरि साधु लियौ,**
**कियौ यों प्रसंग मोसो अंग-संग कीजिये।**
**आज्ञा मोकों दई आप लाल गिरिधारी,**
**अहो सीस धरि लई, करि भोजन हू लीजिये॥**

मीरा जी बड़ी सुन्दर थीं। एक कामी पुरुष इनके रूप पर मोहित था। मीराजी गिरिधर के अलावा किसी को नहीं देखतीं थीं। उस कामी ने विचार किया कि मीरा संतों से बहुत प्यार करती है और उसके यहाँ संतो को कोई रोक-टोक भी नहीं है।एक दिन की बात है, वह विषई पुरुष सुन्दर साधु का वेष बनाकर मीरा के पास आया और उनसे बोला कि मैं गिरधारी लाल का भक्त हूँ, उन्होंने मुझे आज्ञा दी है कि तुम मीरा के पास जाकर उससे अंग-संग करो। कामियों को तो लज्जा आती नहीं है, उस जमाने में भी बहुत दुष्ट लोग रहते थे। मीराजी ने जब गिरधारी लाल का नाम सुना तो वे सच्ची गिरधारी की भक्त थी हीं और उनकी साधु-वेष में निष्ठा भी थी, उन्होंने उस वेषधारी साधु का भी अपमान नहीं किया। वे बोलीं कि महाराज! गिरधारी की आज्ञा तो हमारे सिर पर है, पहले आप भोजन कर लें। वह वेषधारी साधु बहुत प्रसन्न हुआ कि जादू चल गया। ऐसे पाखंडी होते हैं जो संत-वेष में लोगों को ठगते हैं। मीरा जी तो समझ गई थीं कि ये कोई पाखंडी साधु है, भोगवासना-पूर्ति के लिए ये हमारे पास आया है, परन्तु भक्त किसी का अपमान नहीं करते हैं। उन्होंने उस विषई साधु को भी प्रेम से भोजन कराया लेकिन मीरा कितनी चतुर थीं कि जब उसने भोजन कर लिया तो बोलीं अच्छा, तो अब आप हमारे साथ शयन कीजिये।

**"संतनि समाज में विछाय सेज बोलि लियौ,**
**संक अब कौन की निसंक रस भीजियै॥"**

ऐसा कहकर मीराजी ने ठाकुरजी के सामने पलंग बिछाया और कहा- "महाराज ! अब आप हमारे साथ अंग-संग कर लीजिये।" वहां संत-भक्तजन बैठकर कीर्तन कर रहे थे। संतों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि मंदिर में ये क्या हो रहा है ? संतों से मीरा जी बोलीं कि इन्हें गिरधारीलाल ने हमारे साथ अंग-संग करने के लिए भेजा है, इसलिए मैं इन्हें बुला रही हूँ। अब इतना सुनते ही सब संतों को बड़ा क्रोध आया और वे बोले- "अरे ! ये बड़ा पाखंडी है, बड़ा कहीं गिरधारी लाल से आज्ञा लाया है ?"इतना सुनते ही उस साधु का चेहरा सफेद हो गया और वह मीराजी के चरणों में गिर गया।

**सेत मुख भयौ, विषैभाव सब गयौ,**
**नयौ पांयन पै आय, मोकौ भक्तिदान दीजियै॥४७८॥**

उस पाखंडी के सारे विषय-भाव चले गए और बोला कि हे देवी ! मैं महापापी हूँ, आप मेरे ऊपर दया करके मुझे भक्ति का दान दीजिये। मीराजी के शुद्ध भाव के कारण उसका विषय-भाव सदा के लिए चला गया और बिना दुर्वचन बोले ही मीराजी ने मधुरता से उसे सुधार दिया। ऐसे ही हमें भी मधुरता से दूसरे को सुधार देना चाहिए , जैसे चन्दन के ऊपर साँप रहता है पर उसके जहर का प्रभाव उस चन्दन के ऊपर नहीं पड़ता है।

## शरणागतवत्सल का प्रेम-प्रभाव

–दस वर्षीय मधुवनी

**जाकौं मन मोहन अंग करै।**
**ताकौ केस खसै नहीं सिर तैं, जौ जग बैर परै॥**
**हिरनकसिपु-परहार थक्यौ, प्रहलाद न नैंकु डरै।**
**अजहूँ लगि उत्तानपाद-सुत, अबिचल राज करै॥**
**राखी लाज दुपद-तनया की, कुरुपति चीर हरै।**
**दुरजोधन कौ मान भंग करि, बसन प्रबाह भरै॥**
**जौ सुरपति कोप्यौ ब्रज ऊपर, क्रोध न कछू सरै।**
**ब्रज-जन राखि नन्द कौ लाला, गिरिधर बिरद धरै॥**
**जाकौ बिरद है गर्ब-प्रहारी, सो कैसें बिसरै?**
**सूरदास भगवंत-भजन करि, सरन गएँ उबरै॥**

जिसको मनमोहन श्रीकृष्ण ने स्वीकार कर लिया है, उससे संसार भी शत्रुता करेगा तो भी उसके सिर का बाल भी नहीं टूट सकता है। दैत्यराज हिरण्यकशिपु के सब प्रहार खाली गए तो वह थककर प्रह्लादजी से बोला-

**क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयो लोकाः सहेश्वराः।**
**तस्य मेऽभीतवन्मूढ शासनं किम्बलोऽत्यगाः॥**

(श्रीमद्भागवत ७/८/७)

"मेरे क्रोध करने से ईश्वर सहित तीनों लोक काँपने लगते हैं और तू मंदबुद्धि वाला बालक मेरे सामने निर्भय खड़ा है। तुझमें क्या बल है ?"

तब प्रह्लादजी निर्भय होकर बोले

**न केवलं मे भवतश्च राजन् स वै बलं बलिनां चापरेषाम्।**
**परेऽवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः॥**

(श्रीमद्भागवत ७/८/८)

ध्रुव जी जब छोटे से थे तब उनकी सोतेली माँ ने उनको राज्य सिंहासन से हटा दिया और उनका अपमान किया लेकिन उनकी माँ ने उपदेश दिया

**मामङ्गलं तात परेषु मंस्था भुङ्क्ते जनो यत्परदुःखदस्तत् ।**

(श्रीमद्भागवत ४/८/१७)

"बेटा! तू किसी का अमंगल मत सोचना।" जब उन्होंने किसी का अमंगल नहीं सोचा तो उन्होंने अविचल राज्य किया। जब कौरवों ने पांडवों को जुए में चालाकी से हरा दिया, फिर दुर्योधन ने द्रोपदी को नग्न करने की आज्ञा दी क्योंकि पांडवों ने सब दाँव पर लगा दिया था, द्रोपदी को भी लगा दिया था। जब द्रोपदी ने सभा में आने से इन्कार कर दिया तो दु:शासन उसके बाल खींचते हुए भरी सभा में ले आया, उस समय द्रोपदी जी एक वस्त्रा थीं। जब उनका चीरहरण होने लगा, पहले तो अपने दाँतों से साड़ी पकड़ी लेकिन दस हजार हाथियों के बल वाले दु:शासन ने साड़ी खींच ली। जब द्रोपदी के दाँतों से साड़ी का पल्ला छूट गया तब उसने कहा

**गोविन्द द्वारिकावासिन् कृष्ण गोपीजनप्रिय।**
**कौरवैः परिभूतां मां किं न जानासि केशव॥ (महाभारत)**

हे गोविन्द ! हे द्वारिकावासिन !! तुम गोपियों के प्रिय हो, मेरे ऊपर कौरवों ने अत्याचार किया है, क्या तुम जानते नहीं हो? फिर भगवानआये और उसके अधो अंग की साड़ी बन गये। दु:शासन खींचते खींचते थककर गिर पड़ा। सारी सभा बोली- "धिक्कार है! धिक्कार है!!" इस प्रकार भगवान् ने दुर्योधन का मान भंग कर दिया।

इन्द्र ने मद के कारण ब्रज के ऊपर कोप किया कि इस कृष्ण ने हमारी पूजा बंद करवा दी, इनको मद हो गया है, ये ब्रजवासी दूध पी-पीकर के मोटे हो गये हैं, उसने प्रलय के बादलों को भेजा और कहा कि एक भी पशु, यहाँ तक कि एक भी बछड़ा जीवित न बच पावे फिर ब्रज में आँधी तूफान आने लगे, शिलाओं की वर्षा होने लगी। **"शिलावर्षनिपातेन हन्यमानमचेतनम्"** (भागवत १०/२५/१४) सभी ब्रजवासी अचेत होने लगे और भगवानको पुकारने लगे -

**कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो।**
**त्रातुमर्हसि देवान्नः कुपिताद् भक्तवत्सल॥**

(श्रीमद्भागवत १०/२५/१३)

"हे भक्तवत्सल ! देवराज ने हम पर क्रोध किया है, हे महाभाग! गोकुल के नाथ श्रीकृष्ण! हमारी रक्षा करो।" तब भगवान् समझ गये कि इन्द्र को अपनी श्री का मद हो गया है। इसके क्रोध से केवल गिरराज के बिना अन्य कोई देवता आदि नहीं बचा सकते। तब भगवान् ने अपने बाँए हाथ की अँगुली पर गोवर्धन-धारण किया जिससे उसका मान-भंग हुआ, उसके गर्व को भगवान् ने नष्ट कर दिया और इन्द्र ने गोविन्द के पास आकर क्षमा माँगी।

**"गर्व न कीजै बावरे हरि गर्व प्रहारी।"** (मलूकदास जी)

ऐसे गर्व का प्रहार करने वाले भगवानको हम कैसे भूल सकते हैं ? सूरदास जी कहते हैं कि जो शरण में जाता है, उसका अवश्य उद्धार होता है, जैसे बीच सभा में रावण ने अपने भाई विभीषण को लात मारकर बाहर निकाल दिया, फिर भी विभीषणजी बार-बार उसके चरण छू रहे हैं।

**अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा। अनुज गहे पद बारहिं बारा॥**

(श्रीरामचरितमनस,सुन्दरकाण्ड-४१)

शिवजी ने कहा हे पार्वती ! यही संत की बड़ाई है कि मंद रावण मार रहा है लेकिन

विभीषण जी कह रहे हैं - तुम्हारा भला हो।

**उमा संत कइ इहइ बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई।**
**तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा। राम भजें हित नाथ तुम्हारा॥**

(श्रीरामचरितमनस,सुन्दरकाण्ड-४१)

आप मेरे पिता के समान हो, आपने मुझे भले ही मारा है लेकिन आप अगर भगवान् राम को भजेंगे तो आपका हित होगा। ऐसा कहकर वह श्रीरामजी की शरण में चले गए। वहाँ रामादल के परिकर बोले कि ये रावण का भाई निशाचर है, यह किसी दूसरे कारण से आया है।

**जानि न जाइ निसाचर माया। कामरूप केहि कारन आया॥**

(श्रीरामचरितमनस,सुन्दरकाण्ड-४३)

इन निशाचरों की माया को कोई जानता नहीं है। तब भगवान् ने कहा -

**सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत भयहारी॥**

(श्रीरामचरितमनस,सुन्दरकाण्ड-४३)

हे सखा ! यह नीति तो तुमने अच्छी बिचारी है, लेकिन मेरा प्रण है- **"शरणागत के भय को हर लेना।"** तब यह सुनकर हनुमानजी हँस गए और बोले कि भगवान् शरणागतवत्सल हैं, भक्तवत्सल हैं।

**सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना।**
**सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।**
**ते नर पावँर पापमय तिन्हहिं बिलोकति हानि॥**

(श्रीरामचरितमनस,सुन्दरकाण्ड-४३)

चाहे कोई कितना भी पामर पापमय प्राणी है, जिसे देखने में भी हानि होती है, चाहे हजारों ब्राह्मणों का वध करके भी शरण में आये तो भी उसे भगवान नहीं छोड़ते। इसलिए सूरदास जी ने कहा कि भगवान् की शरण में जाने से ही उद्धार (कल्याण) होता है।

# कृपासिंधु का कृपावतार

– ग्यारह वर्षीय दया

भक्तों पर जब-जब कष्ट पड़ता है, तब-तब भगवान् भूमि पर भक्तानुग्रहावतार लेकर दु:ख (विषम-परिस्थिति) दूर करते हैं।

**सरन गए को को न उबार्‌यौ।**
**जब-जब भीर परी भक्तन पै, चक्र सुदर्शन तहाँ सँभार्‌यौ॥**
**भयौ प्रसाद जु अम्बरीष कौं, दुरबासा कौ क्रोध निवार्‌यौ।**
**ग्वालनि हेत धर्‌यौ गोबर्धन, प्रगट इन्द्र कौ गर्व प्रहार्‌यौ॥**
**कृपा करी प्रहलाद भक्त पर, खंभ फारि हिरनाकुस मार्‌यौ।**
**नरहरि रूप धर्‌यौ करुनाकर, छिनक माहिं उर नखनि बिदार्‌यौ॥**
**ग्राह ग्रसत गज कौ जल बूड़त, नाम लेत वाकौ दुख टार्‌यौ।**
**सूर स्याम बिनु और करै को, रंग-भूमि में कंस पछार्‌यौ॥**

जब दुर्वासाजी ने अम्बरीष को मारने के लिए 'कृत्या राक्षसी' प्रकट की, तब (भगवान् के) सुदर्शन चक्र ने उस राक्षसी को मारकर अम्बरीषजी की प्राण-रक्षा की और वह चक्र दुर्वासाजी के पीछे लग गया, भक्तापराध के कारण उन्हें तीनों लोकों में किसी ने नहीं बचाया, सबसे पहले दुर्वासाजी उस चक्र से बचने के लिए शिवलोक में गए तो शंकरजी ने कहा कि आप यहाँ से चले जाइए नहीं तो हमारा शिवलोक जल जाएगा। तब वह ब्रह्मलोक में गए तो ब्रह्माजी ने भी यही कहा कि हे मुनिवर ! आप यहाँ से चले जाइए, नहीं तो यह ब्रह्मलोक भक्तापराध से जल जाएगा। फिर वह विष्णु भगवान के पास गए तो स्वयं भगवान् ने कहा- "मैं इसमें कुछ नहीं कर सकता, मैं भी अपने भक्त का अपराध नहीं सह सकता।

**यस्यामृतामलयश: श्रवणावगाह: सद्य: पुनाति जगदाश्वपचाद्विकुण्ठ: ।**
**सोऽहं भवद्भ्य उपलब्धसुतीर्थकीर्तिंश्छिन्द्यां स्वबाहुमपि व: प्रतिकूलवृत्तिम्॥**

**(भागवत ३/१६/६)**

अगर हमारी भुजा भी भक्त का अपराध करेगी तो उसको भी हम काट डालेंगे। आप हमारे गुरु हो इसलिए हम आपको उपाय बता सकते हैं। आपने जिसका अपराध किया है उसी की शरण में जाओ।" तब वह अम्बरीषजी की शरण में गए तो उन्होंने देखा कि अम्बरीष जी हमारे लिए एक साल से अन्न-जल त्यागकर (भगवान् से प्रार्थना करते हुए) हमारी प्रतीक्षा में खड़े हैं तब उन्होंने कहा कि आज हमने भगवान् के भक्तों की महिमा को देखा। यह तुलसीदासजी ने भी लिखा है रामचरितमानस में

**जो अपराधु भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई॥**

(रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड - २१८)

जो भक्त का अपराध करता है तो वह भगवान् की क्रोधाग्नि से जल जाता है।

भगवान् ने ग्वालवालों के लिए गोवर्धन-धारण किया। इंद्र का गर्व हटाया, जब इंद्र ने बादलों को भेजा कि जाओ ऐसी घन-घोर वर्षा करो जिससे ग्वालवाल, बछड़े, गायें आदि सब मर जाएँ। तब बादलों ने मूसलाधार वर्षा की, आसमान से बड़ी-बड़ी शिलायें गिरने लगीं। ऐसे घोर संकटकाल में भी ब्रजवासियों ने अपनी रक्षा हेतु श्रीकृष्ण को ही पुकारा।

**कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो।**
**त्रातुमर्हसि देवान्न: कुपिताद् भक्तवत्सल॥**

**(भा. १०/२५/१३)**

तब भगवान् ने आकर इंद्र को जड़ बना दिया और गिरिराज पर्वत उठा लिया। फिर इन्द्र ने सोचा कि अब क्या करूँ तो उसने मन ही मन में भगवान् की स्तुति की। तब भगवान् ने उस पर कृपा की। इसलिए भागवत माहात्म्य में कहा है

**भक्ति द्रोहकरा ये च ते सीदन्ति जगत्त्रये।**
**दुर्वासा दु:खमापन्न: पुरा भक्तविनिन्दक: ॥**

(पद्मपुराण,उत्तरखण्ड २/२०)

भक्त से द्रोह करने वाले तीनों लोकों में दु:ख पाते हैं, इस जन्म में तो मिलता ही है लेकिन अगले जन्मों में भी कष्ट उठाना पड़ता है। इसलिए भक्तापराध कभी नहीं करना चाहिए। जब प्रहलादजी को कष्ट दिया हिरण्यकशिपु ने तब नृसिंह भगवान् खम्बा फाड़ कर प्रकट हुए और को मारा और उस असुर का वध कर दिया। जब ग्राह ने गजराज को जल में ग्रसित कर लिया तो उन दोनों के बीच एक हजार वर्ष तक संग्राम हुआ। यह देखकर देवता भी आश्चर्यचकित हो गए। अंत में बहुत दिनों तक बार-बार जल में खींचे जाने से गजेन्द्र का शरीर शिथिल पड़ गया, न तो उसके शरीर में बल रह गया और मन में उत्साह-शक्ति भी क्षीण हो गयी। इधर ग्राह तो जलचर ही ठहरा इसलिए जल में उसकी शक्ति क्षीण होने के स्थान पर बढ़ गई, वह बड़े उत्साह से और भी बल लगा कर गजेन्द्र को खींचने लगा तब गजराज ने हथिनियों का सहारा लिया लेकिन उसको किसी का आश्रय नहीं मिला और वह जल में डूबने लगा, तब उसने सोचा कि अब मेरा यहाँ कोई नहीं है, अत: उसने भगवान् की स्तुति की। गजेन्द्र ने कहा - जो जगत के मूल कारण हैं और सब के हृदय में पुरुष के रूप में विराजमान हैं एवं समस्त जगत के एकमात्र स्वामी हैं, जिनके कारण इस संसार में चेतना का विस्तार होता है। उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ और उनकी शरण ग्रहण करता हूँ। इतना सुनकर भगवान् आये। गजराज ने देखा कि आकाश में गरुड़ पर सवार होकर, हाथ में चक्र लिए भगवान श्रीहरि आ रहे हैं, तब उसने सोचा कि मैं किस प्रकार भगवान् का स्वागत करूँ तब उसने अपनी सूँड़ में कमल का एक पुष्प लेकर भगवान् की ओर ऊपर किया और बड़े कष्ट से बोला- जगद्गुरु आपको नमस्कार है। भगवान ने गजराज को ग्राह से छुड़ाकर ऊपर निकाल लिया और शीघ्र ही चक्र से ग्राह का मुँह फाड़ दिया। इसी प्रकार रंगभूमि (अखाड़े) में कंस को श्यामसुन्दर ने पछाड़ दिया। भगवानबहुत दयालु हैं। सूरदासजी कहते हैं कि उन श्यामसुन्दर के बिना दूसरा कौन इस प्रकार भक्त-रक्षण कर सकता है। इसलिए हमें भगवान का ही आश्रय लेना चाहिए तभी भगवान

❑❑❑